करभ

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

–: प्रकाशक व संपर्क सूत्र :–

निदेशक

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

पोस्ट बैग–07, जोड़बीड., बीकानेर 334001 (राज.), भारत

दूरभाष : 0151–2230183, 2230858, 2230070

फैक्स : 0151–2970153

ई–मेल : nrccamel@nic.in

वेबसाईट : www.nrccamel.icar.gov.in

करभ –2016

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

संरक्षक व प्रकाशक

डॉ. नितीन वसन्त राव पाटिल

निदेशक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

प्रधान सम्पादक

डॉ. सुमन्त व्यास

प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी राजभाषा

सम्पादक

श्री नेमीचन्द बारासा

वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी

संपादक मण्डल

डॉ. राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक

श्री वी.के.पान्डे, प्रशासनिक अधिकारी

श्री भरत कुमार आचार्य, सहायक वित्त एवं लेखाधिकारी

डॉ. राकेश कुमार पूनियाँ, वरिष्ठ तकनीकी सहायक

मुद्रक

स्कूल प्रिंट एण्ड ग्राफिक्स

सीताराम द्वार के पास, जस्सूसर गेट, बीकानेर (राज.)

मो. 9982333378, 9252973175

नोट :– पत्रिका में प्रकाशित लेखों में विचार, लेखकों के अपने हैं।
इन विचारों के लिए प्रकाशक अथवा 'करभ' पत्रिका का सम्पादक मण्डल किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
झींफरा	1
उष्ट्र दूध व्यवसाय के लिए सहकारी समिति का महत्व	4
प्रोबायोटिक दूध उत्पाद और मानव स्वास्थ्य	6
ऊँटनी के दूध को खाद्य पदार्थ के रूप में एफएसएसएआई ने दी मान्यता	9
21 वीं सदी में ऊँट दूध : एक आशा से भरपूर भविष्य	11
ये ए–2 दूध क्या है ?	16
ऊँटों के पेट में पाए जाने वाले सूक्ष्म जीवियों का उनके पाचन में महत्व	18
ऊँटों में श्वसन सम्बन्धी बीमारियों के लक्षण व निदान	20
विभिन्न प्रसार गतिविधियों का ऊँटों के संरक्षण में योगदान	24
पशु चिकित्सा अनुसंधान के क्षेत्र में स्टेम कोशिका : एक परिचय	27
एथनोवेटेरिनरी चिकित्सा पद्धतियों का वैज्ञानिक मानकीकरण	31
पशुओं में यूरिया की विषाक्तताः उपचार एवं बचाव	34
खेजड़ी आधारित कृषि–बागवानी–पशुधन उत्पादन व्यवस्थाएँ विकसित कर आय करें दोगुनी	36
कृषि–रसायनों का बढ़ता उपयोग	42
रामायण से सीखिए मैनेजमेंट के आधुनिक सिद्धांत	46

विषय	पृष्ठ संख्या
भाषा, हिंसा और मीडिया	48
मेरी परछाईं	51
कौशल सिखाता है आदर्श प्रशिक्षण	52
कबूतर	54
परोपकार	54
''प्राचीन स्वास्थ्य दोहावली''	55
ऊँट : एक विलक्षण जीव	56
छड़ी	59
मीडिया, समय और समाज	60
यह कहानी नहीं	62
राजभाषा संबंधी गतिविधियां	65

संरक्षक की कलम से...

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर की वार्षिक राजभाषा पत्रिका 'करभ' के 14 वें अंक के प्रकाशन पर मैं अत्यंत हर्षित हूँ।

धरती का यह अदभुत प्राणी (ऊँट) सूचना एवं प्रौद्योगिकी के इस दौर में भी कहीं न कहीं अपनी पारम्परिक छवि को बनाए रखने की कवायद में लगा हुआ है। परंतु पिछले कुछ वर्षों में इसकी संख्या में निरंतर गिरावट चिंता एवं चिंतन का विषय है। चिंता यह कि इस परिवर्तनशील युग में इस पशु को कैसे संरक्षण व सम्मान मिले ? चिंतन इस बात का कि जिस पशु की रचना ईश्वर ने मानों मरुस्थल के भौगोलिक परिवेश को देखकर ही की हो, वह अनुपयोगी कैसे हो सकता है ? यानी उष्ट्र में निश्चित रूप से अकूत विशेषताओं का खजाना है जिसे समय व परिस्थितियों के अनुसार जांचा–परखा जाना नितांत आवश्यक है।

केन्द्र ने उष्ट्र विकास व संरक्षण की विचारधारा को समय के अनुरूप अपनाया है। अपनी स्थापना से लेकर इन गत 34 वर्षों में केन्द्र ने ऊँटों के लगभग सभी पहलुओं– जनन, प्रजनन, पोषण, शरीर कार्यिकी, आनुवांशिकी, स्वास्थ्य आदि के संबंध में वैज्ञानिक जानकारी ज्ञात की है। साथ ही ऊँट को एक नए आयाम (दुधारू पशु) के रूप में स्थापित करने हेतु ऊँटनी के दूध की लोकप्रियता, स्वीकार्यता एवं औषधीय उपयोगिता के क्षेत्र में पिछले डेढ़ दशक से विशेष रूप से सक्रिय है।

हाल ही में ऊँटनी के दूध के संबंध में केन्द्र को अथक प्रयासों के बाद एक महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफ.एस.एस.ए.आई.) द्वारा ऊँटनी के दूध को खाद्य पदार्थों की श्रेणी में शामिल कर लिया गया है। इस प्रमाणिक सफलता से अब उष्ट्र दुग्ध व्यवसाय में तेजी आने की संभावना है। साथ ही ऊँटनी के दूध का औषधीय महत्व होने से तथा विभिन्न मानवीय रोगों यथा–मधुमेह, क्षय रोग, ऑटिज्म आदि के प्रबंधन में लाभप्रद पाए जाने के कारण आम जन में इसकी आपूर्ति की मांग बढ़ रही हैं। ये तमाम परिस्थितियाँ ऊँटनी के दुग्ध व्यवसाय को व्यापक स्वरूप में परिणत करने हेतु एक सुनहरा मार्ग प्रशस्त करती हैं।

केन्द्र द्वारा बार्क, मुम्बई के साथ समन्वयात्मक परियोजना के तहत थायराइड कैंसर की पहचान हेतु किट का निर्माण किया गया है साथ ही सरदार पटेल आयुर्विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर के साथ सांप(बांडी) के जहर के विरूद्ध एन्टीविनोम के उत्पादन का अनुसंधान कार्य प्रगति पर हैं।

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर ने अपने शोध संबंधी अधिदेशों के क्रियान्वयन के साथ–साथ प्रचार–प्रसार सामग्री यथा 'करभ' पत्रिका, वार्षिक प्रतिवेदन, लघु पुस्तिकाओं, विस्तार–पत्रकों आदि में निहित उपयोगी वैज्ञानिक ज्ञान को राजभाषा के माध्यम से ऊँट पालकों तक पहुंचाने हेतु निरंतर प्रयत्नशील है।

राजभाषा पत्रिका 'करभ' के इस अंक के सभी लेखक गणों को मैं बधाई देता हूँ तथा यह आशा व्यक्त करता हूँ कि पत्रिका में निहित ज्ञान उष्ट्र पालन से जुड़े सभी किसान भाइयों के लिए ज्ञानवर्द्धन करने के साथ–साथ करभ के पाठकों की रूचि को भी बढ़ाएगा।

शुभ कामनाओं सहित...

(नितीन वसन्तराव पाटिल)
निदेशक

प्राक्कथन

भारत की सबसे अधिक बोली व समझी जाने वाली हिन्दी भाषा विश्व भाषा बनने की ओर तेजी से अग्रसर है। जन भाषा हिन्दी अपनी अनेकानेक विशेषताओं के कारण सूचना व प्रौद्योगिकी के इस युग में कम्प्यूटर, मीडिया, बाजारवाद आदि क्षेत्रों में भी अपनी पकड़ मजबूत बनाती जा रही है। यह भाषा वैज्ञानिक व तकनीकी विषयों को भी बड़े सरल व प्रभावी स्वरूप में प्रस्तुत करने का माद्दा रखती है। हाल ही में विज्ञान भारती, राजस्थान द्वारा दिनांक 16–17 दिसंबर, 2016 को आयोजित राष्ट्रीय हिन्दी विज्ञान सम्मेलन में सहभागिता के दौरान इसकी बानगी देखने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इस सम्मेलन का मुख्य ध्येय विज्ञान का प्रसार भारतीय भाषाओं में हो जिससे विज्ञान क्षेत्र में हो रहे विकास से सही रूप में भारतीयता का जुड़ाव हो।

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर एक अनुसंधान संस्थान है तथा यहां वैज्ञानिक शोध एवं प्राप्त महत्वपूर्ण उपलब्धियों को राजभाषा के माध्यम से जरूरतमंद ऊँट पालकों, किसानों एवं आमजन में तत्परता से प्रचारित–प्रसारित किया जाता है। नतीजतन, आज केन्द्र के पास ऊँटों के विभिन्न पहलुओं से जुड़ी उपयोगी जानकारी 60 से अधिक लघु पुस्तिकाओं, विस्तार–पत्रकों, पेम्पलेट आदि स्वरूप में उपलब्ध हैं। केन्द्र 'क' क्षेत्र में स्थित होने के कारण सभी वैज्ञानिक, अधिकारी, कर्मचारी गण अपने कार्यक्षेत्र में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग हेतु अपने दायित्व का बखूबी निर्वहन कर रहे हैं। केन्द्र में आयोजित राजभाषा संबंधी कार्यक्रमों एवं गतिविधियों यथा–हिन्दी पखवाड़ा, राजभाषा कार्यशालाओं, हिन्दी प्रतियोगिताओं, राजभाषा प्रकाशनों आदि में विशेष रूचि दिखाते हैं। केन्द्र की प्रतिष्ठित राजभाषा पत्रिका 'करभ' का सतत रूप से प्रकाशन इस बात का पुख्ता उदाहरण हैं। समाज में हो रहे आर्थिक बदलाव से पशु भी अछूते नहीं रहे. कृषि एवं ग्रामीण जगत में आर्थिक प्रगति से भारवाहक पशु, जिनमें ऊँट प्रमुख है, पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। साहित्य अकादमी से पुरस्कृत लेखक डॉ बादल ने एक कहानी "झीम्फरा" मैं इसका जीवन्त चित्रण किया है, जो कि करभ के वर्तमान अंक में प्रस्तुत है। बदलते परिवेश में ऊँट की प्रासंगिकता कैसे कायम रहे इस दिशा में भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर सतत प्रयासरत है, इसके फलस्वरूप उष्ट्र दुग्ध को भारत सरकार की नियामक संस्था द्वारा प्रमाणित किया गया है।

राजभाषा पत्रिका 'करभ' के 14 वें अंक के प्रकाशन में सहयोग हेतु सभी रचनाकारों का मैं हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। करभ रूपी ज्ञान का यह पुँज जरूरतमंद पशु पालकों के लिए लाभदायक सिद्ध होगा तथा पाठकों के ज्ञान में भी अभिवृद्धि करेगा, साथ ही इस अंक संबंधी प्रतिक्रिया भी हमें आपकी ओर से प्राप्त होंगी, इसी आशा व विश्वास के साथ।

(सुमन्त व्यास)
प्रभारी राजभाषा

झींफरा

मंगत बादल
राजस्थानी साहित्यकार
रायसिंहनगर, राजस्थान

बूढ़ा बड़बड़ाता रहा। बोलते–बोलते उसकी आंखों में आंसू भर आए। पैर कांपने लगे। उसने धीरे–धीरे लाठी का सहारा लेकर एक हाथ जमीन पर टिका लिया फिर धरती पर ही बैठ गया। उसकी आवाज सुनकर उसकी पत्नी आई...

उसने अपनी जेब से चश्मा निकालकर धोती के पल्ले से अच्छी तरह पोंछा। चश्मे की कमानियों पर पक्का धागा बंधा हुआ था जो कि पसीने और मैल से काला पड़ गया था। चश्मे को पोंछा और आंखों पर चढ़ा कर उसका धागा कानों में लपेट लिया। अब उसकी आंखें मोटी–मोटी दिखने लगीं, अपनी जवानी के दिनों में तो इन आंखों की त्योरियां और सुंदरता देखने लायक थी। अचानक सिर में चीसें से चलने लगे। डॉक्टर के पास पहुंचा तो पता चला कि काला मोतिया हो रहा है। जल्दी से ऑपरेशन करवाना ही इलाज है नहीं तो रोशनी जाने का भी खतरा है। उन्होंने ऑपरेशन करवा लिया। तब से चश्मे का साथ है, उन्होंने झुककर बड़ी कठिनाई से लाठी उठाई और धीरे–धीरे चलकर बाड़े में आ गए जहां पशु बंधे हुए थे। एक ओर दो सुंदर भैंसे खड़ी थी। वे पैंतीस–चालीस लीटर दूध देती हैं। एक ओर ट्रेक्टर खड़ा है जिसके ऊपर उनका पोता पड़ोसियों के दो–तीन बच्चों के साथ बैठा खेल रहा है। भरा पूरा एक किसान का परिवार किन्तु बूढ़े की आंखों में बेबसी और उदासी छाई दिखाई देती है। उसने आवाज दी, 'ओ किशन की मां ! क्या कर रही है ? पता नहीं सारे दिन कहां फंसी रहती है ! पोती–पोतो से फुर्सत निकाल कर मेरे पास आकर बैठ। आह! आज तो चला ही नहीं जाता। जोड़–जोड़ दर्द कर रहा है। पता ही नहीं लगता क्या दर्द कर रहा है। कहां दर्द हो रहा है! बुढापा भी तो रोग है।

सबसे बड़ा रोग! सारी हारी–बीमारी बुढ़ापे में आकर इंसान को दबोच लेती है! .....ओह! अब तो हिलना–डुलना ही मुश्किल होता जा रहा है दिनोंदिन। तुमने सुना क्या किशन की मां ? किशन क्या कह रहा था ? वह कह रहा था अपने ऊँट झींफरे की एक टांग टूट गई। बेकार हो गया है वह भी तो बुढ़ा हो गया है बेचारा ऊपर से टांग और टूट गई अरे ! बेटा हम भी तो अब बूढ़े और बेकार हो गये!

बूढ़ा बड़बड़ाता रहा। बोलते–बोलते उसकी आंखों में आंसू भर आए। पैर कांपने लगे । उसने धीरे–धीरे लाठी का सहारा लेकर एक हाथ जमीन पर टिका लिया फिर धरती पर ही बैठ गया। उसकी आवाज सुनकर उसकी पत्नी आई! बुढ़िया की उम्र कोई 65–66 बरस की होगी। वह उसके पास आकर जमीन पर बैठ गई और डांटना शुरू कर दिया।'तुम्हारी आदत नहीं गई। सारे दिन बच्चों को रोकते–टोकते रहते हो। आपका क्या लेते हैं ? उनको अपनी मर्जी के अनुसार काम करना चाहिए। पर आप हर एक बात में टांग अड़ाये बगैर नहीं मानते। क्या बात हो गई। झींफरे को क्या हो गया...? कहकर बूढ़िया बूढ़े की ओर देखने लगी।

बूढ़ा पता नहीं कौन सी दुनिया में जाकर खो गया। बूढ़िया की बात सुनकर एकदम चमका । हूं! क्या हुआ? कुछ नहीं हुआ! झींफरा बूढ़ा हो गया। उसकी टांग टूट गई ? झींफरा अब इन लोगों के काम का नहीं रहा ... तुम्हे याद है . ..कहते–कहते बूढ़ा अतीत के गहरे कुएं में उतर गया। उसके झूर्रियां पड़े चेहरे पर कई रंग आए और उतर गए। जवानी के दिनों की झलक जैसे आंखों में तैर रही थी।... तुम्हें याद है क्या ? मैं तुम्हें पीहर से लेकर आ रहा था। इस

झींफरे पर बैठकर ही हम आ रहे थे। किशन की उम्र तब11–12 साल की होगी। राह में हमें दो लुटेरों ने रोक कर लूटना चाहा। उन्होंने झींफरे की नकेल की तरफ हाथ किया तो झींफरा गलगला कर उनके ऊपर चढ़ गया! फिर तो ऐसा भागा....ऐसा भागा... कि हवा हो गया! लुटेरे देखते ही रह गए। तुमने तो उस दिन घर आकर पूरे पांच रुपए का प्रसाद बांटा। उस दिन यदि झींफरा नहीं होता तो लुटेरे हमें जीते छोड़ देते क्या ? कहीं पर मार–मूरकर फेंक देते। मैंने उस दिन झींफरे के पैरों में घुंघरू बांधे थे वह जब छम–छम चलता तो देखने वाले देखते ही रह जाते। उस दिन तो तुमने भी कहा, झींफरा! तू तो मेरे भाई जैसा है रे। तूने आज हमारी जान बचाई है। उस जमाने में जब लोग रुपए के दर्शन करे बिना ही मर जाते थे, गांव के नंबरदार ने झींफरे के पूरे पांच सौ रुपए बोल दिए। पर हमने बेचा नहीं। नंबरदार ने कहा है, 'मामराज! तुम्हारे ऊँट सरीखा ऊँट इलाके में दूसरा नहीं है? कहते–कहते बूढ़े का गला भर आया। बुढ़िया की आंखों से आंसू सरक कर गालों पर आ गए। उसी झींफरे की आज टांग टूटी हुई है। किशन कहता है वह बेकार हो गया।

उस दिन गणगौर थी। अपने गांव में दस–बारह गांवों का मेला भरा था। ऊँटों की दौड़ हुई, हमारे झींफरे ने सबसे पहले आकर सौ रुपए और आधा सेर चांदी की शर्त जीती थी। वह तो झींफरे का दम–खम था कि अपनी किस्मत ही पलट दी। उन सौ रुपए से जमीन ठेके पर लेकर खेती की। इंद्र देवता भी उस साल खूब बरसे। भरपूर फसल हुई। पूरी पांच सौ मन बाजरी और सौ मन मूंग–मोठ हुए थे। घर में रखने की जगह ही नहीं थी। झींफरे ने अपनी ताकत से सारी जमीन उलटकर उपजाऊ बना दी। इस झींफरे के प्रताप से हम साल–दर–साल मालदार होते गए। घर में अन्न–धन के भंडार भर गए। इस झींफरे के ही बलबूते पर किशन बड़े से बड़े कॉलेज में उच्च शिक्षा प्राप्त कर आज बड़ा किसान बन गया। खेती–बाड़ी की पढ़ाई करके नए–नए तरीकों से खेती करने लगा। यहां तक तो ठीक हैं पर कुछ तो पशुधन की इज्जत करनी चाहिए। कुछ तो हया–दया इंसान के मन में होनी ही चाहिए। सारी उम्र जिसकी मेहनत की कमाई खाई, बुढ़ापे में उसकी टांग टूट गई तो...!

मामराज ने बात बीच में छोड़कर आंखों से चश्मा उतारा और एक बार फिर पोंछा और कहने लगा,'ठीक है सरकार ने तुम्हें कर्जा दे दिया ट्रैक्टर खरीदो और भी साधन खरीदो पर पशुओं का सम्मान करना भी सीखो। यह क्या बात हुई कि बूढ़ा हो गया तो लाठी मारकर घर से बाहर खदेड़ दो। कहां जाएंगे बेचारे मूक जानवर? यही है तुम्हारी इंसानियत! मेरा तो कहना है कि जिस किसान के घर में पशु न हो वह कैसा किसान ? बिना पशु के घर श्मशान जैसा लगता है। कोई किसी का दिया हुआ नहीं खाता। पशु तो अपनी मेहनत की कमाई ही खाता है! ईश्वर ने जिसे चोंच दी है चुग्गा भी देता है। किसी का किसी पर अहसान नहीं। रही बात बुढ़ापे की! वह तो सभी पर आएगा। ट्रैक्टर और ऊँट की बराबरी करता है किशन। भई ! मशीन, मशीन है और पशु, पशु है। मशीन से खेती करके आप धन कमा सकते हो। किंतु प्रेम नहीं मिल सकता। मशीनों से काम कर–करके आप भी एक दिन मशीन बन जाओगे! क्या जाने किशन कि पशु और किसान की भी एक आपस की जुबान होती है जिससे वे एक–दूसरे को समझते और समझाते हैं। जब मैं सारे दिन खेत में काम करके घर की ओर चलने का विचार करता तब यही झींफरा समझ जाता। प्रेम से बलबलाने लगता। उछाले मारता। मैं चिलम पीकर उसका धुआं मुंह से निकालता तो उस धुंए को पीने के लिए मेरे कंधे पर अपनी गर्दन रख देता। मैं चिलम का धुंआ इसके मुंह पर छोड़ता तो सिर ऊंचा उठाकर जोर से बलबलाता तो मेरी सारे दिन की थकान एक साथ ही उतर जाती। तुम्हें पता तो है उन दिनो घरों में कितने चोर–उचक्के घुस जाते थे। रात के समय गैर आदमी को देख कर झींफरा क्रोध से पांव पटकने लग जाता। उछलने लगता। मजाल थी, कभी कोई

गैर आदमी खराब नीयत से इसकी नकेल की तरफ हाथ कर ले।बूढ़े का सांस फूल गया। सांस लेने के लिए थोड़ी देर रुककर फिर बोला,'इसके पुण्य–प्रताप से ही हम इतने फले–फूले! तुम तो यह बात अच्छी तरह जानती हो! कहता हुआ मामराज खड़ा होकर ऊँट के पास गया और उसकी गर्दन हाथ से सहलाने लगा। ऊँट धीरे–धीरे पसर गया इस तरह लग रहा था जैसे कोई ऊँट मलहम लगाता हो। बूढ़ा बड़बड़ाने लगा 'ओहो बुढ़ापा! बेचारे को कव्वों ने तो तंग कर दिया। जगह–जगह चोंच मारकर घाव कर रखे हैं। कौन दवाई लगाये भाई तुम्हारे ? ओ किशन की मां, जा! सरसो का तेल और साथ ही कोई पुराना गुदड़ा ऊपर डाल देंगे तो कव्वों से तो जान बचेगी।' किशन कहता... और बूढ़े की आवाज मुंह में ही रह गई। उनका पांच–छः बरस का पोता आकर तुतलाती जबान में कहने लगा,'दादा! मेला पापा बंदूके लेकर आया है! कहता है है झींफरा बूढ़ा हो गया उसते गोली मालेंगे!'

मामराज ने मुड़कर देखा कि उसका बेटा किशन हाथ में बंदूक लिए खड़ा है। किशन जैसे ही मामराज के पास आया, तो वह अटकते–अटकते रूआंसा होकर बोला, 'बेटा! तुम्हारी मां और मैं भी बूढ़े हो गए! एक–एक गोली हमको भी मार दे। राम तुम्हारा भला करे! कहते हुए बूढ़े ने जाकर ऊँट की गर्दन को अपनी बाहों में ले लिया।

अनुवाद : सावित्री चौधरी

उष्ट्र दूध व्यवसाय के लिए सहकारी समिति का महत्व

आर. के. सावल, प्रधान वैज्ञानिक, राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक
एवं नितीन वसंतराव पाटिल, निदेशक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसन्धान केंद्र, बीकानेर

उष्ट्र दूध उत्पादन, इसका संग्रहण प्रसंस्करण, प्रौद्योगिकीय परिवहरन व विक्रय इत्यादि के विभिन्न चरणों को एक चुनौति के रूप में लेते हुए उष्ट्र दुग्ध व्यवसाय को फलीभूत करने की महत्ती आवश्यकता है। यह जनकल्याणकारी प्रयास साझा स्वरूप में समितियों/गैर सरकारी संगठनों आदि के माध्यम से ही संभव है।

संपूर्ण विश्व में ऊँटों की पारंपरिक उपयोगिता एवं संख्या में निरंतर कमी आ रही है। क्योंकि मशीनीकरण के इस युग में समय की बचत एवं शीघ्र मुनाफा कमाने का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। ऐसे में यह विचारणीय विषय है कि क्या ऊँट इस कसौटी पर खरा उतर सकता है। हां! यदि इसके पारंपरिक उपयोग से इतर सोचा जाए।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यदि हम बात करें तो ऊँटनी के दूध का विभिन्न मानवीय रोगों में लाभप्रद पाए जाने की पुष्टि, उष्ट्र प्रजाति के विकास एवं संरक्षण का नया मार्ग प्रशस्त करती है। आज इसके दूध का मानव कल्याण के लिए औषधि के रूप में उपयोग लिया जाने लगा है। वैज्ञानिक अनुसंधान मधुमेह रोग, मंद बुद्धि बच्चों इत्यादि में इसकी लाभकारिता सिद्ध कर चुके हैं, अब केवल आवश्यकता है तो उसे जरुरतमंद मरीज तक सुनियोजित व सतत रूप से पहुँचाने की। उष्ट्र दूध उत्पादन, इसका संग्रहण, प्रसंस्करण, प्रौद्योगिकीय परिवहन व विक्रय इत्यादि के विभिन्न चरणों को एक चुनौती के रूप में लेते हुए उष्ट्र दुग्ध व्यवसाय को फलीभूत करने की महत्ती आवश्यकता है। यह जन कल्याणकारी प्रयास साझा स्वरूप में समितियों/गैर सरकारी संगठनों आदि के माध्यम से ही संभव है। समितियों द्वारा ऊँटनी के दुग्ध व्यवसाय को एक श्रंखला के रूप में स्थापित करने हेतु उन्हें सामूहिकता में आगे आना होगा जो कि इस क्षेत्र में बेहतर परिणाम दिलाने में मददगार हो सकता है।

उष्ट्र दूध व्यवसाय के लिए संगठित होने के फायदे

1. ऊँट प्राय बोझा ढोने वाला पशु के रूप में इस्तेमाल में लिए जाने के कारण इसके स्वास्थ्य को कम तवज्जों दी जाती है। ऐसे में पशु की देखभाल हेतु सुधार जरूरी है। सहकारी समिति द्वारा सिफारिश किये जाने पर सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं का दायित्व अधिक प्रबल हो जाता है जिसका लाभ पशु पालक को मिल सकता है। ऊँटों के संरक्षण के लिए अच्छी नस्ल/गुणों वाले पशु समिति सदस्यों के लिए लिया जा सकता है या आपस में साझा किया जा सकता है ताकि पीढ़ी–दर–पीढ़ी उत्पादन में वृद्धि हो सके।
2. ऊँटों का मुख्य भोजन वृक्षों से मिलने वाली पत्तियां, चारागाह से मिलने वाले घास, जड़ी बूटियां इत्यादि होता है। वर्तमान में गाँव में गोचर भूमि के कम हो जाने व उस भूमि का सही ढंग से संरक्षण ना होने के कारण अधिकतर ऊँटों द्वारा चाव से सेवन किये जाने वाले वृक्ष की पत्तियों की उपलब्धता कम होती जा रही है जिस कारण चारागाह विकास का बहुत महत्व है।
3. कम संख्या में होने के कारण ऊँटो की बीमारियों के बारे में चर्चा कम होती है। बीमार पशु की उत्पादन क्षमता, स्वास्थ्य पशु की तुलना में कम होती है। पशु पालकों के लिए उसे नजदीकी पशु स्वास्थ्य केंद्र में लेकर जाना कठिन होता है। ऐसे में इलाज समय पर न होने से उत्पादन कम तो होता ही है व स्वास्थ्य अधिक खराब होने पर पशु की मृत्यु भी हो सकती जिस से पशु पालक का काफी नुकसान होता है। समिति के माध्यम से सरकारी संस्थाओ के

अनुभवी पशु चिकित्सकों की सेवाएँ भी ली जा सकती हैं।

4. अन्य दुधारू पशुओं की दूध की मांग को देखते हुए दूध विपणन का कार्य प्रायः निजी संस्थाओं द्वारा ही किया जाता है जिसके कारण, विपणन कार्य ने अपनी ही एक दिशा बना ली है जिसमें पशु पालकों का जुड़ाव उसके उत्पादन, गाँव में उसके संग्रहण, शहर तक पहुँचाने की व्यवस्था, डेयरी में प्रौद्योगिकी, व दूध से बने उत्पादों की बाजार में बिक्री की व्ययस्था करना होती है। इस व्यवस्था को उष्ट्र दूध हेतु भी तैयार करने के लिए ऊँट पालकें को संगठित करने की आवश्यकता है।

5. समिति बना कर संगठित होने पर मुख्य बिक्री से होने वाले लाभ को सदस्यों में बाँटना होता है ताकि भागीदारी बनी रहे क्योंकि संगठित होने से अधिक लाभ हो सकता है। समिति के कार्यों के लिये, सदस्यों में से एक प्रभावी सदस्य का चुनाव करना होगा ताकि वह समिति के कार्यों को साझा कर सके व किसे, क्या जिम्मेवारी देनी है, उसको महत्व बता सके व उस कार्य का चक्र प्रवर्तन के माध्यम से सभी सदस्यों की भागीदारी सुनिश्चित की जा सके।

समिति के कार्यों का लेखा–जोखा रखने, सदस्यों को समय समय पर इकट्ठा करने, कार्य में पारदर्शिता लाने से सभी सदस्यों का जुड़ाव बना रहता है।

समिति के कार्यों के लिये यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि सदस्य किस अंतराल पर मिले व समिति के कार्यों की समीक्षा करें जिसमे लक्ष्य को प्राप्त करने में कितने सफल/विफल, व्यापार में मुनाफा/नुकसान, वित्तीय संस्थाओं से कर्ज, बैठक में ना उपस्थित होने का दंड इत्यादि के बारे में चर्चा होनी चाहीए। चक्र प्रवर्तन के माध्यम से कार्य को सफलता पूर्वक व स्वतन्त्र वातावरण से सदस्य की कार्य कुशलता में अनुकूल प्रभाव होगा। सामाजिक जुड़ाव के मुद्दों के लिये एक दूसरे की मदद करने से सभी परिवारों का विकास निश्चित होगा।

सहकारी समिति बनाने के लिए कम से कम 10 सदस्यों की आवश्यकता होती है। समिति के उदेश्य उष्ट्र पालन से जुड़े सभी पहलुओं व उससे जुड़े विपणन कार्य में सभी की साझेदारी के माध्यम से बांध कर रखने के एक प्रयास में सभी सदस्यों की भागीदारी रहती है। इसे प्रदेश/जिला स्तर पर पंजीकरण करवाया जा सकता है। समिति के कार्यों को पूरा करने के लिए पंजीकरण के पश्चात बैंकों/वित्तीय संस्थाओं से कर्ज भी लिया जा सकता है। अकेले जो कार्य नहीं किया जा सकता उसे संगठित होकर करने से संगठन की क्षमता औरों के लिए उदाहरण बन जाती है।

क्योंकि मरू क्षेत्र में ऊँट एवं ऊँट पालकों की आबादी का घनत्व बहुत कम होने के कारण उन्हें संगठित करना चुनौती भरा कार्य है परन्तु नामुमकिन नहीं, विशेषकर जब यह मानव कल्याण से जुड़ा मुद्दा हो।

प्रोबायोटिक दूध उत्पाद और मानव स्वास्थ्य

देवेन्द्र कुमार, वैज्ञानिक एवं राघवेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसन्धान केंद्र, बीकानेर

"प्रोबायोटिक वे जीवित सूक्ष्मजीव है जिन्हें पर्याप्त मात्रा में लेने पर मनुष्य में स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है"। भारत एवं दुनिया के अधिकांश भाग में प्रोबायोटिक उत्पादों को अक्सर आहार अनुपूरक के रूप में वर्गीत किया जाता है न कि दवाइयों या जैविक उत्पादों के रूप में।

प्राचीन काल से ही किण्वित भोज्य पदार्थों के उत्पादन हेतु लाभकारी सूक्ष्म जीवों का उपयोग होता रहा है लेकिन आज के दौर में विज्ञान एवं तकनीकी विकास के कारण इसकी मानव स्वास्थ्य में उपयोगिता साबित हो चुकी है तथा इस दिशा में निरंतर प्रयास जारी है। किण्वन प्रक्रिया में उपयोग लाने, विभिन्न प्रकार के लाभकारी सूक्ष्म जीवों में कुछ सूक्ष्मजीव ऐसे भी है जिनका उपयोग आज के दौर में मनुष्य में होने वाली विभिन्न बीमारियों के प्रबंधन व उपचार में किया जाने लगा है। ऐसे सूक्ष्म जीवों को प्रोबायोटिक की श्रेणी में रखा गया है। प्रोबायोटिक को कुछ इस प्रकार परिभाषित किया गया है –

"प्रोबायोटिक वे जीवित सूक्ष्मजीव है जिन्हें पर्याप्त मात्रा में लेने पर मनुष्य में स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है"। भारत एवं दुनिया के अधिकांश भाग में प्रोबायोटिक उत्पादों को अक्सर आहार अनुपूरक के रूप में वर्गीत किया जाता है न कि दवाइयों या जैविक उत्पादों के रूप में। भोज्य पदार्थो में पाए जाने वाले सभी लैक्टिक एसिड बेसिलस (LAB) को भोज्य पदार्थ में उपयोग हेतु आम तौर पर सुरक्षित (GRAS) माना जाता है अतः इस तरह के लाभकारी सूक्ष्मजीवों के उपयोग कर बनाये गए भोज्य पदार्थों को आसानी से नियमित रूप से खाने में शामिल किया जा सकता है। किसी भी लाभकारी सूक्ष्मजीवों में निम्न गुण होने पर उस प्रोबायोटिक सूक्ष्मजीव के वर्ग में शामिल किया जा सकता है :

- पाचन तंत्र के एसिड एवं पित्त से सहनशीलता
- संभावित रोगजनक सूक्ष्मजीवों के खिलाफ रोगाणुरोधी गतिविधि (एसिड और बेक्टेरोसिन उत्पादन)
- आंत के सतहों पर रोगजनक सूक्ष्मजीवों के चिपकने की क्षमता को कम करना
- पित्त लवण का जल–अपघटन गतिविधि
- यह रोगजनक नहीं होना चाहिए
- यह मानव शरीर हेतु विषैला नहीं होना चाहिए
- सेल सरफेस प्रोपर्टीज (सेल सरफेस हाइड्रोफोबिसिटी एग्रिगेसन एवं एड्हेसन क्षमता इत्यादि)

भारत में उपलब्ध प्रोबायोटिक दूध उत्पाद

वर्तमान में भारत में कुछ दूध प्रसंस्करण संस्थान हैं जो प्रोबायोटिक उत्पाद बनाने एवं व्यवसाय करने में अग्रणी है। कुछ प्रोबायोटिक उत्पाद इस प्रकार हैं : याकुल्ट (याकुल्ट डेनोन इंडिया प्रा. लि.), न्युट्रीफिट एवं एडवांस प्रोबायोटिक दही (मदर डेयरी), एक्टीप्लस प्रोबायोटिक दही (नेसले इंडिया लिमिटेड)प्रोबायोटिक आइसक्रीम, दही एवं छाछ (अमूल) इत्यादि। इन दूध उत्पादों को बनाने में प्रायः गाय एवं भैस के दूध का इस्तेमाल होते आ रहा है जिसका मुख्य कारण इसकी उपलब्धता एवं जनमासव में स्वीकार्यता है। देश एवं विदेश में हुए अनुसन्धान में यह पाया गया है कि ऊँटनी के दूध में प्राकिर्तिक रूप से पाए जाने वाले लेक्टोवेसिलस बैक्टीरिया में भी कुछ बैक्टीरिया ऐसे हैं जिनमें प्रोबायोटिक गुणवत्ता हैं।

अतः इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ऊँटनी का दूध भी प्रोबायोटिक दुग्ध उत्पाद बनाने हेतु उपयुक्त है। यह भी सर्वविदित है कि ऊँटनी के दूध मानव स्वास्थ्य में अन्य दूध की अपेक्षा ज्यादा लाभकारी है एवं आज के दौर में प्रोबायोटिक दुग्ध उत्पाद की मानव स्वास्थ्य में उपयोगिता पर भी काफी अनुसन्धान किया जा रहा है एवं यह विशेष रूप से कुछ मानव रोगों में अत्यंत लाभकारी पाया गया है, जो आगे इस लेख में वर्णित है। इस आधार पर यह परिकल्पना की जा सकती है कि ऊँटनी के दूध से अगर प्रोबायोटिक दुग्ध उत्पाद बनाई जाए एवं इसका मूल्यांकन मानव स्वास्थ्य में किया जाए तो संभवतः बहुत अच्छे परिणाम आ सकते है। अतः इस दिशा में अनुसंधान की शीघ्र आवश्यकता है।

प्रोबायोटिक उत्पाद का मानव स्वास्थ्य में उपयोग

प्रोबायोटिक्स के उपयोग के साथ मानव शरीर में बहुत सारे स्वास्थ्य प्रभाव जुड़े हैं, लेकिन इनका प्रभाव विभिन्न अवस्थाओं पर निर्भर करता है। किसी भी प्रोबायोटिक सूक्ष्मजीवों का उपयोग व उसका स्वास्थ्य लाभ उसके खुराक, उपयोग की अवधि एवं उत्पाद के प्रकार पर निर्भर करता है। अतः उत्पादनकर्ता से यह अपेक्षित है कि स्वास्थ्य लाभ के किये गए दावे की समस्त जानकारी एवं उपयोग की विधि उत्पाद के पैकेट पर जरुर अंकित करें जिससे उपभोक्ताओं को सही दिशानिर्देश मिल सके। भारत सहित दुनिया के विभिन्न भागों में इस तरह के अनुसंधान किये जा रहे हैं एवं कुछ तथ्य तो स्थापित भी किये जा चुके हैं। इन्ही रिपोर्ट के आधार पर कुछ प्रमुख मानव बीमारियों के नाम अंकित हैं जिसमें प्रोबायोटिक्स के उपयोग से लाभ प्राप्त हो सकता है :

रोगजनक बैक्टीरिया और वायरस के कारण होने वाले दस्त की रोकथाम

हेलिकोबेक्टर पाइलोरी संक्रमण और जटिलताओं में लाभकारी

सूजन–संबंधी आंत्र रोगों और सिंड्रोम में लाभकारी

- कैंसर में लाभकारी
- कब्ज में लाभकारी
- रोग प्रतिरोधी क्षमता बढ़ाने में सहायक
- एलर्जी में उपयोगी
- हृदय रोग में उपयोगी
- मूत्र व जनन तंत्र के रोगों में उपयोगी
- पाचन क्षमता बढ़ाने में सहायक
- मंद बुद्धि वाले बच्चों में अत्यंत लाभकारी

ऊपर लिखित मानव रोगों/अवस्थाओं में से लगभग सभी में ऊँटनी के दूध एवं उत्पाद की उपयोगिता उपलब्ध लेखों व अनुसंधान रिपोर्ट में वर्णित हैं। अतः निश्चित तौर पर ऊँटनी के दूध से बना प्रोबायोटिक दुग्ध उत्पाद मानव स्वास्थ्य में अत्यंत लाभकारी साबित हो सकता है। निम्नलिखित चित्र द्वारा इसकी लाभकारिता का आकलन किया जा सकता है–

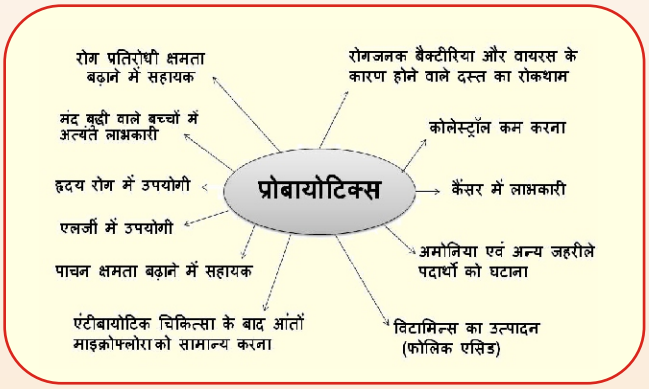

भारत में प्रोबायोटिक्स से सम्बंधित दिशा–निर्देश

प्रोबायोटिक्स की अवधारणा 20वीं सदी में पेश की गयी थींके गया था, लेकिन उभरते वैज्ञानिक सबूतों, सुझाव, पाचन और प्रतिरक्षा कार्यों में उनकी भूमिका के साथ हाल के वर्षों में अत्यधिक महत्व प्राप्त हुआ है। पिछले एक दशक के दौरान भारतीय बाजार में भी प्रोबायोटिक उत्पादों को प्रचुर मात्रा में लाया गया है। लेकिन भोजन में प्रोबायोटिक्स के सुरक्षा और प्रभावकारिता को सुनिश्चित करने के लिए कोई व्यवस्थित एजेन्सी नहीं थी।

भारत में भोजन में प्रोबायोटिक्स के मूल्यांकन से सम्बंधित अनुसंधान, व्यावसायिक रूप से इसका उत्पादन व उपयोग हेतु भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) एवं जैव प्रौद्योगिकी विभाग (डीबीटी) के संयुक्त सहयोग से दिशा–निर्देश तैयार करने के लिए पहल की गई एवं सन 2011 में इन एजेंसियों द्वारा एक दिशानिर्देश प्रकाशित किया गया जिसका शीर्षक है– "आईसीएमआर–डीबीटी – भोजन में प्रोबायोटिक्स के मूल्यांकन के लिए दिशा–निर्देश" जिसमें भारत में बेचे जाने वाले प्रोबायोटिक उत्पादों की सुरक्षा, प्रभावकारिता और विश्वसनीयता के साथ ही लेबलिंग से सम्बंधित सभी दिशा–निर्देशों को अंकित किया गया है।

मैं दुनिया की सभी भाषाओं की इज्जत करता हूं, परंतु मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो, यह हरगिज नहीं सह सकता।

–आचार्य विनोबा भावे

ऊँटनी के दूध को खाद्य पदार्थ के रुप में एफएसएसएआई ने दी मान्यता

राघवेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, राकेश कुमार पूनियां, तकनीकी सहायक
एवं एन.वी.पाटिल, निदेशक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

गौरतलब है कि ऊँटनी के दूध की स्वीकार्यता के संबंध में देश व समाज में निराधार भ्रांतियां व्याप्त थी यहां तक कि ऊँटनी का दूध अन्य पशुओं के दूध के साथ मिलाकर बेचने पर एक व्यक्ति को जेल जाने का प्रकरण भी सामने आया। परंतु एफएसएसएआई द्वारा ऊँटनी के दूध को इंसान के स्वास्थ्य के लिए बेहद लाभदायक बताए जाने से अब ऊँटनी के दूध की बिक्री खुलेआम की जा सकेगी वहीं भविष्य में उष्ट्र पालन व्यवसाय को पुनर्जीवित कर एक बड़े व्यापार के रूप में उभारने में यह मील का पत्थर साबित होगा।

शुष्क और अर्ध शुष्क भू–भागों के विकास में उष्ट्र प्रजाति के महत्व को देखते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा वर्ष 1984 में बीकानेर (राजस्थान) में स्थापित राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र ने विगत वर्षों में ऊँटों के प्रजनन, जनन, पोषण, शरीर क्रिया विज्ञान, स्वास्थ्य आदि विभिन्न पहलुओं पर महत्वपूर्ण डेटाबेस तैयार कर वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान बनाई है। वहीं दूसरी ओर मरूस्थल की पारिस्थितिकी पद्धति के प्रमुख एवं महत्वपूर्ण घटक ऊँट की (आवागमन/बोझा ढोने इत्यादि कार्यों में लगभग 60 प्रतिशत) पारंपरिक उपयोगिता को बदलते परिदृश्य में यांत्रिक सुविधाओं के तेजी से विस्तारण ने काफी हद तक सीमित बना दिया। ऐसे में देश का एक महत्वपूर्ण अनुसंधान केन्द्र होने के नाते उष्ट्र प्रजाति का विकास एवं सरंक्षण के दायित्व से केन्द्र भलीभांति परिचित था। चूंकि उष्ट्र दूध भारत के राजस्थान, गुजरात व हरियाणा प्रान्त के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत समय से लोगों द्वारा निर्मित चाय, खीर, घेवर के अलावा कच्चा या उबालकर प्रयोग में लिए जाने साथ ही उष्ट्र प्रजाति से जुड़ा एक प्रमुख समुदाय 'रायका' द्वारा ऊँटनी के दूध का सेवन करने पर अधिक सेहतमंद पाए जाने पर केन्द्र की इस विचारधारा को बल मिला कि ऊँट एक बहुद्देशीय पशु है जिसका कि उपयोग दूध की दृष्टि से भी लेने की प्रबल संभावनाएँ हैं। अतः ऊँटनी के दूध को प्रोत्साहित किए जाने की मुहिम वर्ष 2006 में 'कैमल मिल्क पालर्र' तथा वर्ष 2008 में देश की पहली 'कैमल डेयरी' के रूप में प्रारम्भ की गई। दूसरी ओर केन्द्र द्वारा की गई शोध में ऊँटनी का दूध मधुमेह, क्षय रोगों के प्रबंधन में कारगर सिद्ध हुआ है साथ ही पीलिया, फेटी लीवर, ड्राप्सी, एड्स जैसी खतरनाक बीमारी में भी यह इम्यूनो सिस्टम को मजबूत बनाए रखने में यह मददगार है।

ऑटिज्म की प्रतिशतता भारत में दिनों दिन बढ़ती जा रही है जिसमें पंजाब राज्य में अधिकतर प्रकरण सामने आए है तथा राजस्थान के कुछ हिस्सों में भी यह रोग पाया गया है। शोध में ऑटिज्म नामक बीमारी से ग्रसित बच्चों के स्वास्थ्य सुधार में ऊँटनी के दूध का अत्यंत महत्वपूर्ण पाया जाना वैश्विक स्तर पर ऊँटनी के दूध की मांग को बढ़ाएगा जिससे ऊँट पालकों को दूध के माध्यम से अच्छी आमदनी प्राप्त होगी।

भारत दूध उत्पादन की दृष्टि से विश्व में प्रथम स्थान पर है परंतु अभी भी प्रति व्यक्ति दूध उपलब्धता कम है तथा दूध उपलब्धता का आँकड़ा घरेलू आवश्यकताओं को पूरा नहीं करता। अतः ऊँटनी का दूध की दृष्टि से उपयोग लेते हुए इसमें विद्यमान गुणधर्मों का उपयोग मानव स्वास्थ्य लाभ हेतु लिया जा सके, इस हेतु भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र से ऊँट की हर नस्ल से सैंकड़ों सैंपल फूड सेफ्टी एंड स्टेंडर्ड अथॉरिटी (एफएसएसएआई) को भेजे गए। मानव जीवन के लिए उपयोग एवं खाने में काम आने वाली चीजों को देश की श्रेष्ठ प्रामाणिक संस्था एफएसएसएआई

लंबे रिसर्च और मापदंडों पर खरा उतरने पर अधिकृत रूप से मुहर लगाती है। केन्द्र के लगभग 12 वर्षों के सतत प्रयासों एवं एफएसएसएआई द्वारा ऊँटनी के दूध को खाद्य पदार्थ के रूप में अपने विभिन्न पैरामीटर्स के आधार परखने के उपरांत आखिरकार केन्द्र को एक बड़ी जीत मिली है कि ऊँटनी का दूध इंसानों हेतु पूर्णतया फायदेमंद है तथा इसे खाद्य पदार्थ के रूप में मान्यता प्रदान की जाती है। एफएसएसएआई ने यह माना है कि ऊँटनी का दूध, 3 फीसदी फेट, 4–5 फीसदी प्रोटीन, क्षार सहित तय मापदंडों पर सटीक (फुल–प्रूफ) बैठता है। भाअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर द्वारा बदलते परिदृश्य में ऊँटों की घटती आबादी एवं सीमित उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए ऊँट को पूर्णतया एक दुधारू पशु के रूप में स्थापित करने की कवायद पिछले कई वर्षों से की जा रही थी ताकि इसके माध्यम से ऊँट पालकों के सामाजिक व आर्थिक स्तर में बदलाव लाया जा सके।

गौरतलब है कि ऊँटनी के दूध की स्वीकार्यता के संबंध में देश व समाज में निराधार भ्रांतियां व्याप्त थी यहां तक की ऊँटनी का दूध अन्य पशुओं के दूध के साथ मिलाकर बेचने पर एक व्यक्ति को जेल जाने का प्रकरण भी सामने आया। परंतु एफएसएसएआई द्वारा ऊँटनी के दूध को इंसान के स्वास्थ्य के लिए बेहद लाभदायक बताए जाने से अब ऊँटनी के दूध की बिक्री खुलेआम की जा सकेगी वहीं भविष्य में उष्ट्र पालन व्यवसाय को पुनर्जीवित कर एक बड़े व्यापार के रूप में उभारने में यह मील का पत्थर साबित होगा।

निष्कर्षतः राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र के लंबे प्रयासों के बाद मिली मान्यता न केवल केन्द्र अपितु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के लिए एक बड़ी उपलब्धि है। ऊँटनी के दूध के इस सफल अभियान के पीछे केन्द्र की वैज्ञानिकों, मानव संसाधन विकास (एचआरडी), मंत्रालय व सरकार के समन्वित प्रयासों ने महत्ती भूमिका निभाई हैं। केन्द्र, एफएसएसएआई द्वारा ऊँटनी के दूध में वसा का प्रमाण 1.50 से 3 प्रतिशत तक करवाने के लिए हर संभव प्रयास करेगा। उष्ट्र प्रजाति के पुर्नोत्थान के लिए यह समय की मांग है चूंकि भारत ही एक राष्ट्र है जिसके द्वारा सुसंबद्ध (इंटीग्रेटेड) रूप से दुनिया के सामने ऊँटनी के दूध को विपणन के तौर पर मॉडल के रूप से रखा जा सकता है परंतु इसके लिए ऊँट पालकों के साथ–साथ अनुसंधानिक, सामाजिक, चिकित्सकीय आदि क्षेत्रों से जुड़े वैज्ञानिकों को पुरजोर से आगे आना होगा तभी ऊँटों का महत्व और अधिक बेहतर स्वरूप में सामने लाया जा सकेगा तथा पिछले दो दशक से तेजी से घट रही उष्ट्र आबादी पर काफी हद तक विराम लगाया जा सकेगा।

21 वीं सदी में ऊँट दूध : एक आशा से भरपूर भविष्य

अशोक कुमार नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक, फतेह चंद टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक,
शरत चन्द्र मेहता, प्रधान वैज्ञानिक एवं जितेन्द्र कुमार, तकनीकी अधिकारी
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसन्धान केंद्र, बीकानेर

आज की तारीख में ऊँट के दूध उत्पादों के लिए स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय मांग आपूर्ति से अधिक है। संयुक्त अरब अमीरात में अमीरात इंडस्ट्री को ऊँट दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए और दुनिया भर में एक अग्रणी देश के रूप में एक मजबूत और टिकाऊ ऊँट दूध उद्योग के निर्माण के लिए चुना गया है। वर्तमान में संयुक्त अरब अमीरात और कुवैत के आउटलेट में सादा, ताजा दूध, सुगंधित दूध और पनीर के विकल्प मौजूद हैं।

क्या आप एक ऐसी जगह के बारे में जानते हैं जहाँ चार हजार से अधिक शांत, मित्रता और सभ्य व्यवहार वाले ऊँट के झुण्ड का वैज्ञानिक पद्धति से पालनपोषण और रख रखाव किया जाता है, उन्हें मशीनों से दुहा जाता हो और ऊँटनी दूध से स्वादिष्ट, सुगन्धित, चॉकलेट, झागदार कॉफी और स्ट्रॉबेरी स्वाद का दूध तैयार किया जाता हो। यदि नहीं, तो हम आपको बताते हैं कि यह जगह यूनाइटेड अरब एमिरतेस की राजधानी दुबई के बाहरी इलाके में है , जिसे एमिरतेस इंडस्ट्री ऑफ कैमल मिल्क और प्रोडक्ट्स , यानि केमलीसिअस के नाम से जाना जाता है। यह दुनिया का पहला और सबसे बड़े पैमाने का डेयरी फार्म है यहाँ सभी कार्य जैसे ऊँट के दूध के प्रसंस्करण, परीक्षण और वितरण इत्यादि सब कुछ एक ही छत के नीचे सम्पन्न किये जाते हैं।

25 साल पहले, ऊँट –दूध की सुविधा को स्थापित करने का विचार दुबई में केंद्रीय पशु चिकित्सा अनुसंधान प्रयोगशाला (सीवीआरएल)में पैदा हुआ और ऊँटनी दूध के महत्वपूर्ण स्वास्थ्य लाभ के वैज्ञानिक प्रमाण प्राप्त करने के लिए विशेष उद्देश्य के साथ अनुसंधान शुरू किया गया। इस अनुसन्धान का अंतिम लक्ष्य बाजारों में ऊँट के दूध और इसके स्वास्थ्य लाभ को उपभोक्ताओं की एक बड़ी संख्या को सुलभ करना था केमलीसिअस, केंद्रीय पशु चिकित्सा अनुसंधान प्रयोगशाला के संस्थापक, डॉ उलरिच वेर्नेरी के मस्तिष्क की उपज है। उनका उद्देश्य, बेदोएन समुदाय द्वारा प्रयोग किये किये जाने वाले उत्पाद का स्थानीय समाज में मधुमेह की उच्च व्यापकता को मुकाबला करने हेतु व्यवसायीकरण करना है ।

शेख मोहम्मद बिन राशिद अल मकतूम, दुबई के शासक के स्वामित्व वाली इस परियोजना दुनिया में सबसे उच्च तकनीक की ऊँट के दूध डेयरी बन गयी है। इस डेयरी में 4,200 ऊँट प्रबन्धन हेतु लगभग 150 श्रमिक हैं जिनका सभी ऊँटनियों का आराम से और आसानी से मिल्किंग पार्लर में प्रबंधन उनका लक्ष्य है और 600–700 ऊँटनियों का दिन में दो बार दूध निकालते है। दूध दोहन पूरी तरह से स्वचालित है और मशीनरी भी ऊँट निप्पल के आकार में अनियमितता के लिए अनुकूलित है। प्रति दिन 5000 लीटर दूध को भूमिगत मार्ग से चलाने पश्चात एक ठंडे टैंक में जमा किया जाता है तत्पश्चात इसे संसाधित किया जाता है कमेलिसिऔस ने 2000 से अधिक पशुओं को प्रशिक्षित कर ऊँट दुनिया में एक अद्वितीय कार्य किया और एक भी ऐसी ऊँटनी नहीं पाई जो प्रौद्योगिकी को स्वीकार और सीखने/करने में असमर्थ हो।

केमलीसिअस ऊँट

मशीनों से ऊँट का दूध दुहना

हालांकि ऊँट के दूध की बीमारी का इलाज करने की क्षमता पर अध्ययन शायद ही व्यापक किया गया है, परन्तु पारंपरिक ज्ञान ने काफी लंबे समय पहले ही, ऊँट के दूध की मधुमेह और अन्य बीमारियों का मुकाबला करने की क्षमता को पहचाना हुआ था। यहाँ के लोग रेगिस्तान में ऊँट के साथ, तेल की खोज से पहले से रहते आ रहे हैं और पृथ्वी पर सबसे मजबूत और कठिन लोग थे जो छाया में 55 डिग्री गर्मी में मात्र ऊँट के दूध और खजूर पर जीवित रहे। लेकिन तेल की खोज ने इस चुनौतीपूर्ण जीवन शैली को एक पीढ़ी के भीतर पूरी तरह से बदल दिया है। अब स्थानीय आबादी में मधुमेह का स्तर काफी बढ़ गया है।

केमलीसिअस ने सुचारू संचालन के लिए ऊँट प्रशिक्षण को केंद्र बिन्दु माना है और विशेष प्रकार के बाड़े डिजाइन किए हैं जहाँ ऊँटनियाँ अपने बछड़े की अनुपस्थिति में प्रतिदिन दो बार आसानी से दूध निकालने देती हैं। यह पारंपरिक विधियों के बिलकुल विपरीत है कि दूध के स्राव को प्रोत्साहित करने के लिए एक बछड़ा की उपस्थिति की आवश्यकता होती है।

रेगिस्तान में ऊँट डेयरी, गाये डेयरी से भिन्न है जहाँ गायों के लिए गर्मियों में छाया नीचे 50 डिग्री तापमान बहुत शारीरिक कष्टदायी है और राहत हेतु या तो पानी (मूल्यवान वस्तु) से छिड़काव करें या इन्हें वातानुकूलित हॉल में रखें जबकि ऊँट छाया में भी बड़े आराम से रहता है।

इस ऊँट डेयरी फार्म में बछड़ों को माँ के बगल वाले बाड़े में रखा जाता है। ग्याभिन ऊँटनियों हेतु थोड़ी दूर अलग बाड़े की व्यवस्था है। डेयरी फार्म का एक महत्वपूर्ण पहलू है कि ऊंटों के व्यायाम के लिए ऊँटों हेतु एक चार किलोमीटर पैदल ट्रैक का निर्माण किया गया है। पैदल ट्रैक बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि ऊँट स्वाभाविक रूप से स्वतंत्र रूप से घुमने वाला प्राणी है। ऊँटों को प्रतिदिन इस ट्रैक पर एक घंटे का व्यायाम कराया जाता है। कुछ ऊँट रेत में लोटना पसंद करते हैं।

ऊँट फार्म की मदद के लिए तो दो मजबूत अनुसंधान प्रयोगशालाऐं स्थापित की गयी हैं और ऊँट संबधित दूध, आहार और दूध की गुणवता जांच आदि के सभी आंकड़े दर्ज किये जाते हैं। यह तथ्य सभी को मालूम है कि ऊँट दूध का लंबे समय तक शैल्फ जीवन है। पास्तुरीकरण के पश्चात दूध को बिना किसी खराबी के फ्रिज में 14 दिनों के लिए रखा जा सकता है। जनवरी 2011 में यूरोपियन टीम द्वारा डेरी की जांच की गयी थी कि डेयरी उनके कठोर आयत नियमों के अनुकूल है या नहीं। दुबई में स्थित इस ऊँट डेयरी ने अपने अनुसन्धान से जो ज्ञान प्राप्त किया है, उसे अन्य समुदायों को हस्तांतरित भी करती है और मानती है कि इसे कम धन निवेश के साथ एक छोटे पैमाने पर दोहराया जा सकता है । खाद्य और कृषि संगठन भी ऊँट पालन को छोटे पैमाने पर खाद्य सुरक्षा के एक साधन के रूप में बढ़ावा दे रहा है। अफगानिस्तान की एक परियोजना में ऊँट दूध के उत्पादन और बिक्री की वजह से स्थानीय लोगों की दैनिक आय में तीन गुनी वृद्धि देखी गयी है। यही कारण है कि दुबई की यह डेयरी लोगों, सरकार, समुदायों को ऊँट के दूध और डेयरी उत्पादों से प्रोत्साहित कर गरीबी से बाहर निकलने का रास्ता दिखा रही हैं उनके लिए छोटी अवधि का प्रशिक्षण भी आयोजित कराती है जहाँ वे कम परिष्कृत उपकरणों का उपयोग सकते हैं।

ऊँट के दूध और उत्पाद के लिए अमीरात उद्योग (ईआईसीएमपी)

वर्ष 2003 में अनुसंधान के पूरा होने के बाद, ऊँट के दूध एवं उत्पाद के लिए अमीरात इंडस्ट्री को स्थापित किया गया । 2006 तक दूध उत्पादन की सुविधाएं जुटाई गयी और उसी वर्ष के अगस्त में केमलिसिऔस ब्रांड नाम के तहत, पहली बार ऊँट के दूध उत्पादों को संयुक्त अरब अमीरात में शुरू किया गया।

अमीरात इंडस्ट्री दुनिया में नवीनतम मानकों और 4,000 ऊँटों के लिए प्रौद्योगिकी के साथ, सबसे उन्नत और पहली पूरी तरह से एकीकृत ऊँट के दूध उत्पादन संबंधी सुविधा चलाती है। अमीरात इंडस्ट्री प्रसंस्करण सुविधा, ऊँट फार्म के भीतर ही स्थित है, और यह दुनिया का पहला अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी और ऊँट अनुसंधान आधारित परिष्कृत ऊँट दुहना संयंत्र है।

अमीरात इंडस्ट्री सुविधाओं में दूध उत्पादन पर बारीकी से उच्चतम अंतरराष्ट्रीय मानकों अनुसार नजर रखी है और सभी सुविधाओं और डेयरी प्रसंस्करण, दोनों के लिए आईएसओ 22000 प्रमाण प्राप्त हैं, और एचएसीसीपी प्रक्रिया का पालन करता है। निर्यात के लिए पूर्ण दूध उत्पादन और प्रसंस्करण यूरोपीय संघ की आवश्यकताओं को पूरा करता है।

एक सशक्त ऊँट दूध उद्योग के विकास में अग्रणी, अमीरात इंडस्ट्री का पर्यावरण और जल संरक्षण हेतु दुबई नगर पालिका और केंद्रीय पशु चिकित्सा अनुसंधान प्रयोगशाला, मंत्रालय, सभी के साथ समन्वय हैं। यूरोपीय संघ के क्षेत्र के लिए अपने उत्पादों को निर्यात करने के लिए पहली बार ऊँट के दूध उत्पादन सुविधा प्राप्त करने के लिए दुनिया भर में व्यापक यूरोपीय संघ आयोग के अनुमोदन में इसे सूचीबद्ध किया गया। इसके अलावा 2013 में अमीरात इंडस्ट्री को मलेशिया के लिए निर्यात परमिट उसी वर्ष प्रदान की गई थी और अगस्त 2014 में मलेशियाई हलाल प्रमाण पत्र के साथ भी सम्मानित किया गया।

आज की तारीख में ऊँट के दूध उत्पादों के लिए स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय मांग आपूर्ति से अधिक है। संयुक्त अरब अमीरात में अमीरात इंडस्ट्री को ऊँट दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए और दुनिया भर में एक अग्रणी देश के रूप में एक मजबूत और टिकाऊ ऊँट दूध उद्योग के निर्माण के लिए चुना गया है। वर्तमान में संयुक्त अरब अमीरात और कुवैत के आउटलेट में सादा, ताजा दूध, सुगंधित दूध और पनीर के विकल्प मौजूद हैं।

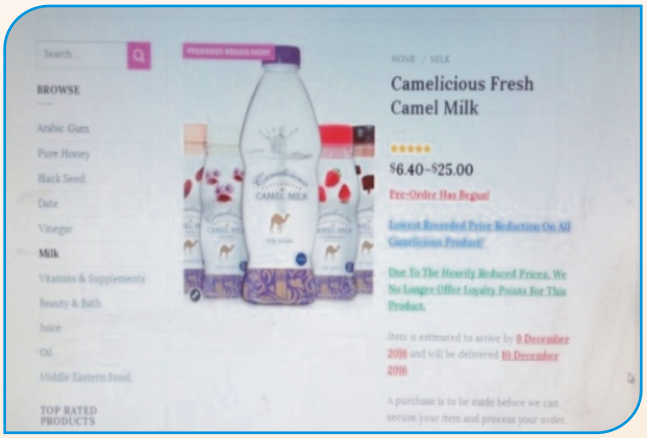

केमलिसिअस ऊँट का ताजा दूध (6 से 25 डॉलर), ईबे की वेबसाइट पर उपलब्ध है।

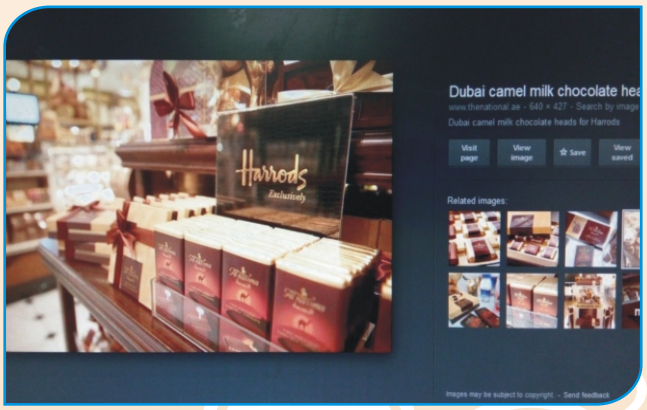

दुबई मिल्क चोकलेट

क्मेलिसिऔस ऊँट घी

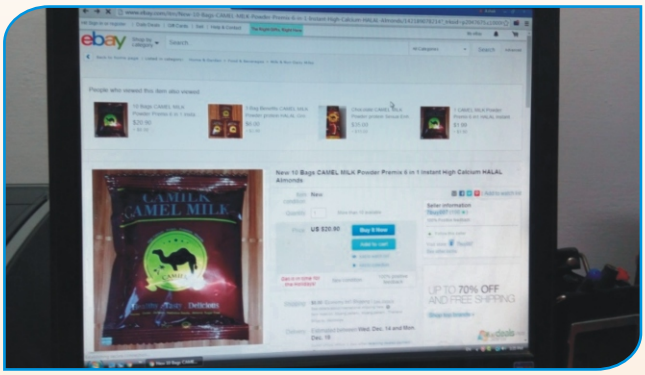

ऊँट मिल्क पाउडर

ऊँट दूध ही क्यों ?

ऊँट दूध अत्यंत पौष्टिक है। मध्य 20 वीं सदी तक, मध्य पूर्व रेगिस्तान के बेदोएँ कबीले के घुमंतु लोग अपने पारंपरिक और स्वस्थ मुख्य आहार में इसका इस्तेमाल करते रहे हैं और उन्हें कठोर रेगिस्तान जीवन का सामना करने के लिए यह दूध आवश्यक प्रोटीन, विटामिन और कार्बोहाइड्रेट प्रदान कराता है। बेदोएँ जाति के लोग भी ऊँट वसा और दूध का इस्तेमाल धूप से सुरक्षा के लिया किया करते थे।

- ऊँट के दूध में गाय दूध की तुलना में लौह तत्व दस गुणा अधिक होता है।
- ऊँट के दूध में वसा 2–3 प्रतिशत के लगभग पाई जाती है गाय के दूध की तुलना में 50 प्रतिशत है।
- ऊँट के दूध में उच्च प्रतिशत असंतृप्त वसीय अम्ल पाए जाते हैं जो मानव शरीर के स्वस्थ हृदय कामकाज सहायता करने के लिए, कोलेस्ट्रॉल को कम करने में मदद करते हैं
- ऊँट दूध प्राकृतिक विटामिन सी में समृद्ध है और गाय के दूध तीन से पांच गुणा अधिक है। विटामिन सी प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायता करता है।
- ऊँट के दूध को आत्मकेंद्रित या एएसडी से पीड़ित बच्चों के लिए फायदेमंद पाया गया है। ऑटिज्म स्पेक्ट्रम तंत्रिका संबंधी एक गंभीर विकार, जो 3 साल की उम्र तक के बच्चों को निशाना बनाता है और पीड़ित बच्चों को मानसिक मंदित के साथ सामाजिक संवाद स्थापित करने में बाधा डालता है।
- देश और विदेश में हुए कई नैदानिक शोध के परिणाम भी बताते हैं कि ऊँट का दूध मनुष्यों में रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मददगार है। ऊँट के दूध में विद्यमान प्राकृतिक इंसुलिन ,रक्त में शर्करा के स्तर को नियंत्रित करता है और कई शोधों द्वारा मधुमेह टाइप दो के रोगियों में सहायक सिद्ध किया जा चुका है ऊँट दूध में अधिक मात्रा में अदभुत प्रोटीन पाए जाते हैं जो रोग प्रति रोधक क्षमता में वृद्धि करते हैं। बायोएक्टिव घटकों के कारण, ऊँट दूध का पोषण बहुत अधिक हो जाता है। एक सऊदी अरब प्रयोगशाला परीक्षणों के जटिल सेट अनुमान लगाया है कि ऊँट दूध में प्रोटीन के 200 से अधिक प्रकार होते हैं । ये इम्युनोग लोबुलिन प्रोटीन की कक्षाओं के साथ–साथ प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाने में मदद करते हैं।
- ऊँट के दूध में उच्च राशि का गाबा (गामा–एमिनो बुत्र्यिक एसिड) पाए जाते हैं जो एक न्यूरोट्रांसमीटर, मानव तंत्रिका तंत्र के मुख्य घटकों में से एक है और गाबा–पी रिसेप्टर्स को कुशलता से सक्रिय करने में सक्षम हैं और मांसपेशियों की कोशिकाओं और न्यूरॉन्स के बीच तालमेल में एक

महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

- अनुसन्धान बताते हैं कि ऊँट दूध, लैक्टोज असहिष्णुता वाले मनुष्यों के लिए एक विकल्प है क्योंकि इसमें गाय दूध में पाए जाने वाला बीटा लेक्टो–ग्लोबिन नहीं होता जिससे लैक्टोज असहिष्णुता होती है।
- ऊँट दूध जीर्ण हेपेटाइटिस से पीड़ित रोगियों को ठीक करने में सहायक है।
- ऊँट दूध, इरेक्टाइल डिसफंक्शन से पीड़ित लोगों के लिए भी प्रभावी माना जा रहा है। नपुंसकता आज की दुनिया के परिदृश्य में पुरुषों में बहुत आम है। दबाव और तनाव,शारीरिक शक्ति की हानि के स्तर में वृद्धि कारक है अपर्याप्त आहार पुरुषों में नपुंसकता के लिए एक और व्यापक कारणों में से एक है।
- ऊँट दूध, क्षय रोग, दस्त, गठिया और कई अन्य बीमारियों के इलाज में मददगार हो सकता है। हालांकि इसे प्रमाणित करने हेतु व्यापक, विस्तृत शोध उपलब्ध नहीं है पर इस दिशा में व्यापक विस्तृत शोध की आवश्यकता है ।
- स्वास्थ्य और सौंदर्य के संबंध में विशेष रूप से ऊँट के दूध के अद्वितीय विशेषताओं के परिणाम बहुत उत्साहजनक रहे हैं। वर्तमान अध्ययन में, ऊँट के दूध मधुमेह प्रकार द्वितीय, हेपेटाइटिस और स्व–प्रतिरक्षित बीमारियों के साथ रोगियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसन्धान बीकानेर में भी 2008 में एक ऊँट डेयरी स्थापित की गयी थी और प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में भी दूध और इसके उत्पादों का प्रचार/प्रसार किया जा रहा है ताकि जन समुदाय इससे लाभान्वित हो।

केन्द्र का मिल्क पार्लर

ऊँटनी के दूध से तैयार कुल्फी का लुप्फ उठाते हुए पर्यटक

अभी हाल में 03 दिसम्बर 2016 को एनडीटीवी चैनल के अनुसार, देश की सबसे बड़ी दूध और दूध उत्पाद वितरण कंपनी 'अमूल' ने भी एलान किया है कि कच्छ में ऊँट दूध का प्लांट तैयार है और अगले तीन माह में देश में पहले अहमदाबाद से अपने अमूल बूथ द्वारा 500 मिली लीटर बोतल में ऊँट दूध का वितरण आरम्भ करेगी और बाद में दिल्ली और मुंबई में भी वितरण करेगी। निश्चय ही यह खबर बहुत ही सुखद, प्रेरणादायक प्रसन्नता वाली है और ऊँट दूध और दूध उत्पाद में नयी क्रांति लाएगी। इससे ऊँट पालक को बहुत ही प्रेरणा मिलेगी और ऊँट पालन व्यवसाय को बढ़ावा मिलेगा।

स्त्रोत : केमलिसिअस

ये ए–2 दूध क्या है ?

सुमन्त व्यास
प्रधान वैज्ञानिक,
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसन्धान केन्द्र, बीकानेर

ए–1 दूध के हानिकारक प्रभाव के बारे में ऑस्ट्रेलिया के वैज्ञानिक डॉ. ऐलिअत तथा साथियों ने 90 के दशक में सर्वप्रथम चेतावनी दी थी। उन्होंने एक शोध पत्र में 20 विकसित देशों (भारत शामिल नहीं) में सर्वे के आधार पर निष्कर्ष निकला कि ए–1 बीटा कैसीन दूध तथा क्रोनिक हार्ट डिजीज व बच्चों में पाए जाने वाले टाइप–1 डायबिटिक मेलितिस में मजबूत सम्बन्ध है। इन शोध पत्रों का मीडिया में भी व्यापक जिक्र हुआ तथा विकसित राष्ट्रों में जन चेतना हुई।

आजकल पूरे विश्व में विशेषकर विकसित देशों में "ए–2 दूध" ने धूम मचा रखीं है। भारत में भी इसकी चर्चा होने लगी है। आखिर यह "ए–2 दूध" क्या है ? "a2milk" तथा "A2milk" रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क हैं। अतः "A2milk" या "ए–2 दूध" का प्रयोग संज्ञा या विशेषण के रूप मैं किया जा सकता है। यह (ए–2 दूध) सामान्यतया गाए के ऐसे दूध के बारे में प्रयोग होता है, जिसमें ए–2 बीटा कैसीन अधिक होता है या ए–1 बीटा कैसीन नहीं होता है।

गाय के दूध में 87 प्रतिशत पानी होता है तथा 13 प्रतिशत ठोस पदार्थ होते हैं। ठोस पदार्थ में वसा, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन व खनिज पदार्थ होते हैं। दूध के प्रोटीन में कैसीन प्रमुख होता है तथा इसमें भी बीटा कैसीन 30–35 प्रतिशत होता है। बीटा कैसीन दूध का एक महत्वपूर्ण प्रोटीन है। गाय के दूध में बीटा कैसीन भी कई प्रकार के होते हैं, जिनमें ए–1 व ए–2 मुख्य हैं। बीटा कैसीन में 209 एमिनो एसिड होते हैं तथा ए–1 व ए–2 में सिर्फ एक एमिनो एसिड का फर्क होता है। ए–1 में 67 वां हिस्टीदीन होता है तथा ए–2 में 67 वां प्रोलीन होता है। 67 वें एमिनो एसिड पर ही पाचक एंजाइम कार्य कर बीटा कैसीन को विभाजित करते हैं। ये पाचक एंजाइम ए–1 प्रोटीन से बीटा कैसोमोर्फिन–7 (BCM-7) को अलग कर देता है। परन्तु यही पाचक एंजाइम ए–2 प्रोटीन को 67 वें स्थान से विभाजित नहीं कर पाते। अतः बीटा कैसोमोर्फिन–7 (BCM-7) का उत्पादन नहीं हो पाता। कई शोध पत्रों में दावा किया जाता है कि बीटा कैसोमोर्फिन–7 (BCM-7) मानव स्वास्थ्य के लिए लाभदायक नहीं है तथा डायबिटीज व अन्य रोगों का कारण बन सकता है। ए–2 दूध को ए–1 दूध से बेहतर बताने का यही आधार है। परन्तु जैसा कि हर वैज्ञानिक रिपोर्ट के साथ होता है, कुछ अन्य वैज्ञानिक इसके विपरीत भी कहतें हैं।

ऐसा माना जाता है कि पहले सभी गायों में ए–2 बीटा कैसीन ही पाया जाता था। परन्तु 5000–10000 वर्ष पूर्व जब गाय यूरोप में ले जाई गयी तब म्युटेशन हुआ तथा प्रोलीन के 67 वें स्थान पर हिस्तीदीन आ गया और कुछ गायों में ए–1 बीटा कैसीन पाए जाने लगा। बाद के वर्षों में विभिन्न नस्लें विकसित हुई तथा विकसित पश्चिमी देशों में ए–1 दूध अधिक मिलने लगा। दूध उत्पादन, बेहतर प्रजनन क्षमता व प्रोटीन गुणवत्ता के लिए सेलेक्टिव ब्रीडिंग होने लगी तथा ए–1 एलील (जीन) केरिअर सांड जो कि उपरोक्त इछित गुणों में उत्तम थे, को चयनित किया जाने लगा। कृत्रिम गर्भाधान से इन सांडों का वीर्य दूर दराज के देशों में भी प्रयुक्त हुआ तथा ए–1 एलील फैलता गया।

हालाँकि विकसित पश्चिमी देशों में ए–1 बीटा कैसीन दूध अधिक मिलने लगा। परन्तु इसके प्रतिशत में देश तथा नस्लों में भिन्नता पाई गयी। जैसे कि हौल्स्तीन–फ्रिसियन (एच एफ) में सबसे ज्यादा ए–1 है। उत्तरी अमेरिका, यूरोप, ऑस्ट्रेलिया व न्यूजीलैंड में एच एफ गायों में 90 प्रतिशत से ज्यादा एच एफ गायों में ए–1 पाया

जाता है। वहीं गूएर्न्सी नस्ल में ए–2 98 प्रतिशत पाया जाता है। यह नस्ल फ्रांस में पाई जाती है। ए–1 बीटा कैसीन संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड तथा यूरोप (फ्रांस को छोड़कर) की गायों के दूध में अधिक पाया जाता है। एशिया व अफ्रीका की गायों में ए–2 बीटा कैसीन दूध होता है।

ए–1 दूध के हानिकारक प्रभाव के बारे में ऑस्ट्रेलिया के वैज्ञानिक डॉ. ऐलिअत तथा साथियों ने 90 के दशक में सर्वप्रथम चेतावनी दी थी। उन्होंने एक शोध पत्र में 20 विकसित देशों (भारत शामिल नहीं) में सर्वे के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि ए–1 बीटा कैसीन दूध तथा क्रोनिक हार्ट डिजीज व बच्चों में पाए जाने वाले टाइप–1 डायबिटिक मेलितिस में मजबूत सम्बन्ध है। इन शोध पत्रों का मीडिया में भी व्यापक जिक्र हुआ तथा विकसित राष्ट्रों में जन चेतना हुई।

सन 2000 में न्यूजीलैंड में एक कम्पनी "A2 Corporation" की स्थापना हुई। इसके एक संस्थापक डॉ. कोरन मैक्लाशियन थे, जिन्होंने केम्ब्रिजे विश्वविद्यालय में पढ़ते हुए ए–2 व ए–1 दूध की अवधारणा दी थी। इन्होंने एक जेनेटिक परीक्षण का पेटेंट करवाया जिसमें यह पता लगाया जा सकता था कि फलां गाय ए–1 बीटा कैसीन के बिना दूध देती है या नहीं। इसने ऐसे दूध के विपणन की कोशिश भी की। चूँकि इस कम्पनी की मुहीम से न्यूजीलैंड का डेरी उद्योग ही कठघरे में खड़ा हो गया था, अतः व्यापक आर्थिक हानि की आशंका में इस कम्पनी पर व्यवसायीक प्रतिद्वंदियों ने कई मुकदमें कर दिए। प्रारंभ में इन्हें पशुपालकों का भी सहयोग नहीं मिला। सन 2003 में कुछ पशुपालक आगे आये तथा इस कम्पनी से करार किया तथा ए–1 दूध का व्यावसायिक विपणन प्रारंभ हो गया। 2003 के मध्य में ही कम्पनी के दोनों संस्थापकों का देहांत हो गया। उसके बाद इसका मालिकाना हक कई बार बदला गया और इसका कार्यक्षेत्र न्यूजीलैंड से बाहर ऑस्ट्रेलिया में भी हो गया। 2009–10 तक कम्पनी लाभ में नहीं आयी। 2009 में श्री कीथ वुडफोर्ड नें एक किताब लिखी– "डेविल्स इन द मिल्क" इसमें मुख्यतः ए–1 बीटा कैसीन के दुष्परिणामों पर लिखा गया था। यह बहुत लोकप्रिय हुई और बेस्टसेलर रही। इसके फलस्वरूप ए–2 दूध के बारें में जन जाग्रति हुई तथा ए–2 दूध की मांग बढ़ने लगी। 2010 में इस कम्पनी ने ए–2 मिल्क के अन्य उत्पाद जैसे कि "योगर्ट", व "बेबीफूड" को भी बाजार में उतारा। 2011 में इसने मुनाफा अर्जित करना प्रारंभ किया। उत्तरोतर प्रगति के फलस्वरूप 2017 में 2016 के मुकाबले तीन गुणा ज्यादा बिक्री हुई है तथा 2016–17 के प्रथम 6 माह में ही कम्पनी नें 40 लाख यूएस डॉलर का मुनाफा कमा लिया है।

भारत में भी ए–2 दूध की चर्च होने लगी है तथा उपभोक्ताओं द्वारा इसकी मांग की जाने लगी है। हमारे यहाँ ए–1 बीटा कैसीन की समस्या गंभीर नहीं है क्योंकि भारत में भैंस का दूध देश के कुल दुग्ध उत्पादन में आधे से ज्यादा योगदान देता है और भैंस के दूध तथा हमारी देशी नस्ल की गायों के दूध में ए–1 बीटा कैसीन नहीं होता सिर्फ ए–२ बीटा कैसीन ही होता है। बकरी तथा भेड़ के दूध में भी सिर्फ ए–2 बीटा कैसीन ही होता है। फिर भी हमारी ब्रीडिंग पॉलिसी तथा गो पालकों में हौल्स्तीन–फ्रिसियन (एच एफ) की लोकप्रियता को देखते हुए सावधानी बरतने की जरूरत है भारत में भा.कृ.अ.प.– राष्ट्रीय डेरी अनुसन्धान संस्थान, करनाल में ए–2 बीटा कैसीन दूध देने वाली या ए–2 बीटा कैसीन के बिना दूध देने वाली गाय का जेनेटिक परीक्षण होता है। अभी तक ए–1 बीटा कैसीन युक्त दूध के दुष्परिणाम निर्विवाद रूप से स्थापित नहीं हुए हैं फिर भी अगर उपभोक्ताओं में ए–2 दूध का रुझान बढ़ता है तो हमारे नीति–निर्धारकों को इसके सही सर्टिफिकेशन के लिए पॉलिसी, दिशा–निर्देश बनाने तथा सर्टिफिकेशन एजेन्सी की स्थापना के लिए कार्य करना होगा।

ऊँटों के पेट में पाए जाने वाले सूक्ष्म जीवियों का उनके पाचन में महत्व

राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक, मुहम्मद मतीन अंसारी, वैज्ञानिक
एवं एफ. सी. टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँटों इस कारगर पाचन क्षमता में उनके पाचन तंत्र में पाए जाने वाले एंजाइम, पाचन श्राव, अम्ल व क्षारीय रासायनों के अलावा मौजूद सूक्ष्म जीवियों का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। इन सूक्ष्मजीवियों में बैक्टेरिया, अर्किया, कवक तथा प्रोटोजुआ शामिल हैं। इन सूक्ष्म जीवियों की संख्या बहुत कुछ भोजन पर भी निर्भर करता है। मोटे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ये सूक्ष्म जीवी जरुरत पड़ने पर अपनी संख्या बढ़ा लेते हैं ताकि पाचन की क्रिया आसानी से हो सके।

ऊँटों का पाचन तंत्र अन्य मवेशियों (जुगाली करने वाले जानवरों) जैसे कि गाय, भैंस, भेड़, बकरी आदि से थोड़ा अलग होता है। इन मवेशियों के पेट चार भागों में बंटे होते हैं जिन्हें रूमेण, रेटिकुलम, ओमैसम और अबोमेसम कहा जाता है, जबकि ऊँटों के पेट के सिर्फ तीन भाग ही होते हैं जो संरचना एवम् कार्य में रूमेण, रेटिकुलम और ओमैसम से मिलते–जुलते होते हैं। यही कारण है कि कई बार ऊँटों को सूडो (छद्म) रुमिनेंट भी कहा जाता है। हांलाकि मोटे तौर पर ऊँटो और अन्य मवेशियों की पाचन क्रिया में काफी समानता होती है, क्योंकि दोनों का मुख्य आहार पेड़–पौधे और घास–पात है। ऊँटों का मुख्य भोजन रेगिस्तानी पेड़–पौधे हैं, पर यदि हरी घास खाने को मिले तो वो भी बड़े चाव से खाते हैं।

अपनी लम्बी गर्दन और कटे ऊपरी होठ के कारण ऊँट ऊंची–ऊंची झाड़ियों और वृक्ष की पत्तियों को खाने में सक्षम हैं। साथ ही अन्य मवेशियों से इतर आगे के दांत मौजूद होते हैं जिनकी सहायता से वे पौधों तथा पत्तियों को काट भी सकता है। ऊँटों के पेट (फोर स्टमक) में खाद्य पदार्थ अन्य मवेशियों की तुलना में ज्यादा समय तक बने रहते हैं, जिससे उनका पाचन ज्यादा अच्छी तरह से होता है। कठोर वनस्पतियों को पचाने की क्षमता ऊँटों में अन्य मवेशियों से तकरीबन तीस प्रतिशत ज्यादा होती है। अतः हम ऐसा कह सकते हैं कि ऊँट उन पेड़–पौधों को भी पचा सकते हैं जिन्हें अन्य मवेशी नहीं पचा सकते। यह तो सर्वविदित ही है कि ऊँट काफी कम पानी पीकर अपना गुजारा कर लेते हैं। असल में ऊँट की आंतों में पानी को सोखने की क्षमता अन्य मवेशियों से ज्यादा होती है, इसलिए उनका गोबर भी काफी सूखा और कड़ा होता है।

ऊँटों की कारगर पाचन क्षमता में उनके पाचन तंत्र में पाए जाने वाले एंजाइम, पाचन श्राव, अम्ल व क्षारीय रासायनों के अलावा मौजूद सूक्ष्म जीवियों का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। इन सूक्ष्म जीवियों में बैक्टीरिया, अर्किया, कवक तथा प्रोटोजुआ शामिल हैं। इन सूक्ष्म जीवियों की संख्या बहुत कुछ भोजन पर भी निर्भर करती हैं। मोटे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ये सूक्ष्म जीवी जरुरत पड़ने पर अपनी संख्या बढ़ा लेते हैं ताकि पाचन की क्रिया आसानी से हो सके।

इन सूक्ष्म जीवियों द्वारा विभिन्न तरह के फैब्रोलायटिक एंजाइम जैसे कि सेल्लुलेज, डायास्टेज इत्यादि का स्रवण होता है जो भोज्य पदार्थो में पाए जाने वाले रासायनों को विखंडित कर पाचन योग्य बनाते है। साथ ही पेट में पाए जाने वाले ये सूक्ष्मजीवी जब भोजन पदार्थ के साथ पाचन तंत्र में आगे जाते हैं तो आंत में मौजूद एसिड तथा एंजाइम से उनका भी पाचन हो जाता है और वे एक अच्छे प्रोटीन स्रोत की तरह काम में आ जाते हैं। इसी माइक्रोबियल पाचन के दौरान मीथेन गैस का भी उत्पादन होता है जिसे पशु अपने मुंह द्वारा समय समय पर बाहर निकलता रहता है। मवेशियों द्वारा उत्पादित मीथेन गैस

ग्लोबल वार्मिंग और ग्रीन हाउस प्रभाव को भी बढ़ाता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि ऊँट अन्य मवेशियों की तुलना में काफी कम मीथेन का उत्पादन करता है।

अतः हम कह सकते हैं कि ऊँट पालन पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी फायदेमंद है। हाल हीं में ऑस्ट्रेलिया में हुए शोध कार्यों से यह पता लगा है कि जो मवेशी ऊँटों के साथ चारागाह में चराई के लिए जाते हैं, उनके पाचन तंत्र में पाए जाने वाले सूक्ष्मजीवियों के प्रजातियों में बदलाव आता है जिसके फलस्वरूप उनके आहार में पाए जाने वाले फाइबर को पचाने की उनकी क्षमता में भी वृद्धि होती है। हमारे केंद्र में हुए शोधों से भी इस बात की पुष्टि हुई है कि ऊँटों के आहार नाल में कुछ खास किस्म के सूक्ष्मजीवी होते हैं जो अन्य मवेशियों में या तो नहीं पाए जाते या काफी कम मात्रा में रहते हैं। इस बात की प्रबल संभावना है कि ऊँटों के आहार नाल में पाए जाने वाले कुछ सूक्ष्मजीवी यदि अन्य मवेशी को दिए जाए तो उनकी पाचन क्षमता में इजाफा हो सकता है। दूसरे शब्दों में, ऊँटों के पाचन तंत्र में पाए जाने वाले कुछ सूक्ष्म जीवियों को अन्य पशुओं के लिए प्रोबायोटिक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। साथ ही उनके इस्तेमाल से पशुओं से उत्सर्जित होने वाले मीथेन गैस में भी कमी लायी जा सकती है।

ऊँटों में श्वसन सम्बन्धी बीमारियों के लक्षण व निदान

शिरीष डी. नारनवरे, वैज्ञानिक एवं श्याम सिंह दहिया, वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट ही ऐसा एक पालतू पशु है जो कि अत्यधिक ठण्ड व गर्मी वाला मौसम भी सहन कर सकता है। इस विशिष्ट गुण के बावजूद भी भारत में ऊँटों की संख्या में भारी गिरावट हो रही है। इसके कारण कई हैं जैसे कि खेती व माल ढोने के लिए ऊँटों की उपयोगिता में कमी, कम प्रजनन क्षमता व चरागाह में कमी। इसके अलावा श्वसन सम्बन्धी बीमारियां जो कि ऊँटों की उत्पादन क्षमता को प्रभावित करती है व मृत्युदर को भी बढ़ाती हैं।

दुनिया भर में हो रहे जलवायु परिवर्तन की वजह से ऊँटो का पशुपालन के क्षेत्र में काफी महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि ऊँट ही ऐसा एक पालतू पशु है जो कि अत्यधिक ठण्ड व गर्मी वाला मौसम भी सहन कर सकता है। इस विशिष्ट गुण के बावजूद भी भारत में ऊँटों की संख्या में भारी गिरावट हो रही है। इसके कारण कई हैं जैसे कि खेती व माल ढोने के लिए ऊँटों की उपयोगिता में कमी, कम प्रजनन क्षमता व चरागाह में कमी। इसके अलावा ऐसी बीमारियां जो कि ऊँटों की उत्पादन क्षमता को प्रभावित करती है व मृत्युदर को भी बढ़ाती हैं, इनका काफी ज्यादा योगदान है। ऐसी बीमारियों में श्वसन सम्बन्धी बीमारियां जिन्हें स्थानीय भाषा में ''खुडक'' भी कहा जाता है, काफी गंभीर बीमारी है जो ऊँटों में उत्पादन क्षमता में कमी व अधिक मृत्युदर के लिए उत्तरदायी है। इस लेख में ऐसी ही कुछ महत्वपूर्ण श्वसन सम्बंधी बीमारियों की जानकारी दी जा रही है।

विषाणु जनित बीमारियां

1. मर्स (मध्य पूर्व रेस्पिरेटरी सिन्ड्रोम)

मध्य पूर्व रेस्पिरेटरी सिन्ड्रोम (मर्स) बीमारी कोरोना वायरस के द्वारा होती है। सर्वप्रथम यह बीमारी सितम्बर, 2012 में सऊदी अरब में रिपोर्ट की गई। भारत में अभी तक यह बीमारी नहीं पाई गयी है। मर्स के सभी मामले अरब प्रायद्वीप और आस–पास के देशों जैसे, बहरीन, इराक, ईरान, इसराइल, पश्चिमी तट, गाजा और जॉर्डन, कैवेत, लेबनान, ओमान, कतर, सऊदी अरब, सीरिया, संयुक्त अरब अमीरात (यू.ए.ई) और यमन में पाये गए हैं। बीमारी का महामारी विज्ञान बताता है कि इसमें कई प्रकार से पशुओं द्वारा मनुष्यों में प्रसारण द्वारा होता है और कभी–कभी द्वितीयक प्रसार द्वारा एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य में भी हो सकता है। हाल ही के नवीनतम अनुसंधानों से पता चला है कि ऊँट मर्स कोरना वायरस संक्रमण का सीधा स्रोत है। संक्रमित ऊँटों में श्वास लेने में तकलीफ, नाक से पानी बहना आदि लक्षण प्रकट होते हैं। मर्स कोरोना वायरस मुख्यतः युवा ऊँटों को प्रभावित करता है। इस बीमारी के सम्भावित खतरे को देखते हुए तथा ऊँटों की इसके प्रसार में मुख्य भूमिका देखते हुए, भारत में भी ऊँटों के टोलों, मेलों और विपणन प्रणाली पर विशेष निगरानी रखने की जरूरत है।

2. पेरा इन्फ्लुएन्जा

यह बीमारी उतनी गंभीर नहीं है जब तक की इसमें कोई जटिलता ना आये क्योंकि इस बीमारी का संक्रमण काल मात्र 34 दिन का होता है जिसके बाद ऊँट पूरी तरह स्वस्थ हो जाता है। लेकिन इस बीमारी से पशुओं के दूसरे जीवाणुओं से संक्रमित होने का खतरा रहता है। इस बीमारी के संक्रमण के बाद गलघोंटू बीमारी होने की भी संभावना ज्यादा होती है। इस बीमारी में निमोनिया के लक्षण फेफड़ों में दिखाई देते हैं जिससे रोगग्रस्त ऊँट को सांस लेने में तकलीफ व नाक से पतला अथवा गाढ़ा स्त्राव निकलता है।

3. कैमेल पॉक्स

इस बीमारी में मुंह व पैर की त्वचा पर होने वाली छोटी–छोटी फुंसियों के साथ–साथ श्वास सम्बन्धी लक्षण भी दिखाई देते है। रोग ग्रस्त ऊँट को श्वास लेने में तकलीफ, बुखार व आँख से पानी बहना जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। इस बीमारी से ग्रसित पशुओं के दूसरे जीवाणुओं से संक्रमित होने का भी खतरा रहता है।

4. पी. पी. आर.

पी. पी. आर. एक अत्यंत तीव्र रूप से होने वाला रोग है, जिसमें बहुत ज्यादा मात्रा में पशु रोग ग्रस्त हो जाते है व इसमें मृत्युदर भी अधिक होती है। यद्यपि यह बीमारी प्रमुख रूप से जुगाली करने वाले छोटे पशुओं जैसे भेड़ व बकरियों में पायी जाती है लेकिन यह बीमारी ऊँट में भी पाई गई है। इस बीमारी के ऊँटों में प्रमुख लक्षण हैं पीली व खूनी दस्त, स्वस्थ पशु में अचानक मृत्यु व गर्भपात। इसके साथ–साथ ऊँट में बुखार, मुंह पर फुन्सियां व कटाव, श्वास में तकलीफ, निमोनिया, आँख आना व आँख से पानी बहना जैसे लक्षण दिखाई देते हैं।

जीवाणु जनित बीमारियाँ

1. क्लेबसियेल्ला निमोनिया

यह बीमारी प्रमुख रूप से निमोनिया के लिए उत्तरदायी है। इस बीमारी के प्रमुख लक्षणों में दर्द दायक खाँसी, जुकाम, नाक से हल्के पीले रंग का पतला अथवा गाढ़ा स्त्राव आना, श्वास व नाडी की गति में वृद्धि व बुखार जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। किसी–किसी जानवर में शक्तिहीनता, दूध में कमी व जुगाली में कमी जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। फेफड़ों को स्टेथोस्कोप से जांचने पर इसमें से घर्षण या रगड़ जैसी आवाज आती है। भारत में क्लेबसियेल्ला निमोनिया के जीवाणु तीव्र श्वास सम्बन्धी बीमारी से ग्रस्त ऊँटो के फेफड़ों में पाए गए हैं। इस तीव्र श्वास सम्बन्धी बीमारी को स्थानीय लोग 'खुडक' नाम से जानते हैं जिसमे रोग ग्रस्त ऊँटो में निमोनिया हो जाता है (चित्र क्र. 1)

चित्र क्र.1 खुड़क बीमारी से ग्रस्त ऊँट

2. ग्लैंडरस

ग्लैंडरस बीमारी में रोग ग्रस्त ऊँट के नाक से पीला हरा गाढ़ा स्त्राव निकलता है। इसके साथ–साथ बुखार, खाँसी व नासिका में अल्सर, सूजन व गांठे आ जाती हैं जिनमें कभी–कभी मवाद भी होता है। त्वचा में भी गाँठे दिखाई देती हैं। फेफड़ों में सफेद गांठे दिखाई देती हैं जैसी की टीबी में होती हैं। ऊँट की आँखों से स्त्राव बहता है व आँखों में सूजन आती है। इस रोग के जीवाणु रोगग्रस्त ऊँट के खून में पाए जाते हैं व रक्त के नमूनों से इस रोग का निदान प्रयोगशाला में किया जा सकता है। इस बीमारी पर विशेष निगरानी की जरूरत है, क्योंकि यह बीमारी संक्रमित ऊँट के संपर्क में आने पर मनुष्यों में भी होती है।

4. टीबी / क्षय रोग / तपेदिक

क्षयरोग (टी.बी.) ऊँट, गाय, भैंस, भेड़, बकरी, घोडा, कुत्ता, बिल्ली, मनुष्य, जंगली पशु, पक्षियों इत्यादि में पाई जाने वाली एक बहुत पुरानी तथा प्रमुख जीवाणु जनित संक्रामक बीमारी है। इस रोग में फेंफड़ें विशेष रूप से प्रभावित होतें हैं। यह बीमारी पशुओं में मायकोबैक्टेरियम बोविस जीवाणुओं से होती है। इस रोग का प्रसार स्वस्थ ऊँटों मे क्षयरोग से ग्रसित ऊँट अथवा अन्य जानवरों के संपर्क मे आने से होता है। साधारणतः रोगग्रस्त जानवर के कफ / बलगम, छींक, नाक से निकलने वाले स्त्राव, श्वास, गोबर, मूत्र, दूध, रक्त तथा कभी–कभी वीर्य में क्षयरोग के जीवाणु मौजूद होते हैं व स्वस्थ ऊँटों में यह हवा के द्वारा साँस लेने पर अथवा जीवाणुओं से संक्रमित दूध के सेवन अथवा संक्रमित चारे व पानी के सेवन द्वारा हो सकता है। कमजोर ऊँटों व जिनमें पौष्टिक आहार की कमी हो, उनमें यह रोग होने की संभावना अधिक होती है। जिन पशुओं में रोग प्रतिकार क्षमता कम होती है, जैसे नवजात बछड़े अथवा बूढ़े ऊँट अथवा ब्याने के बाद आई शरीर में कमजोरी अथवा कोई अन्य रोग का संक्रमण जैसे सर्रा (तिबरसा) इत्यादि उनमें इस रोग के होने का खतरा ज्यादा रहता है। गर्भकाल मे संक्रमण होने पर गर्भ में पल रहे भ्रूण को भी संक्रमण का खतरा रहता है जिससे नवजात क्षयरोग से ग्रस्त पैदा हो सकता है।

इस रोग में लक्षण काफी समय बाद व धीरे– धीरे प्रकट होते हैं तथा कई बार लक्षणों का पता ही नहीं चल पाता। इस बीमारी में रोग ग्रस्त ऊँट में कई दिनों तक रहने वाला हल्का बुखार, खान–पान में कमी तथा कमजोरी जैसे लक्षण दिखाई देते हैं, ये लक्षण कई महीनों अथवा सालो तक रह सकते हैं। प्रतिजैविक दवा देने से भी ऊँट की हालत मे सुधार नहीं होता। साथ ही खांसी, श्वास लेने में तकलीफ व श्वास लेने की गति में वृद्धि जैसे लक्षण दिखाई देते हैं व अंततः ऊँट की मृत्यु हो जाती है।

जीवित ऊँटों में क्षय रोग का निदान बहुत मुश्किल होता हैं क्योंकि कोई भी परीक्षण निश्चित रूप से इस रोग का निदान नहीं कर सकता हैं। बड़े पैमाने पर जीवित पशुओं में क्षयरोग के निदान के लिए अभी तक केवल ट्यूबरकुलीन टेस्ट ही ऐसा परीक्षण है जो कि उपयोग में लाया जाता है। क्षयरोग से ग्रसित ऊँट का शव–परीक्षण करने पर फेंफडों मे सफेद–पिली कठोर गाँठे (ग्रेनुलोमा) दिखाई देती हैं (चित्र क्र.2)। यह गाँठे दीर्घकालीन रोगग्रस्त ऊँटों में अन्य अंगों जैसे यकृत, प्लीहा, हृदय, गुर्दे, गर्भाशय, आँत व मस्तिष्क में भी पाई जा सकती है। इन गांठों में एसीड फास्ट स्टेन तकनीक द्वारा स्मीअर परीक्षण से क्षयरोग के जीवाणु आसानी से देखे जा सकते हैं।

इस रोग से बचाव के लिए ऊँट पालकों को अपने ऊँटो को पौष्टिक आहार खिलाना चाहिए ताकि उनकी प्रतिरक्षा प्रणाली किसी भी संक्रमण से लड़ने में सक्षम रहे। क्षयरोग से ग्रस्त अथवा इससे संदिग्ध ऊँटो के बीच में कार्य करने वाले व्यक्तियों व बाड़ों की सफाई करने वाले व्यक्तियों को हमेशा मुँह व नाक पर मास्क अथवा कपड़ा ढकना चाहिए, हाथ में दस्ताने व कपड़ों के ऊपर एप्रन पहनना चाहिए। बाड़ों में काम करते समय पहनने वाले कपड़ों को अलग रखना चाहिए व उनकी नियमित रूप से धुलाई करानी चाहिए।

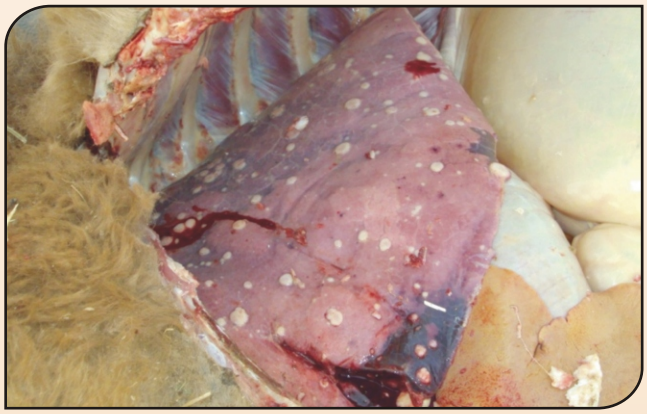

चित्र क्र.2. टीबी से ग्रसित ऊँट के फेफड़े में सफेद छोटी–छोटी गांठे

फफूंद जनित बीमारियाँ

1. एस्पर्जिल्लोसिस

यह एक फफूंद द्वारा होने वाली बीमारी है। यह बीमारी फफूंद से संक्रमित चारा खाने अथवा फफूंद के नाक द्वारा फेफड़ों में चले जाने से ऊँटो में हो सकती है (चित्र क्र. 3)। इस बीमारी में रोग ग्रस्त ऊँट में खान–पान में कमी, दुर्बलता, नाक से स्त्राव व आँखों से पानी बहना जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। इसके साथ–साथ खाँसी व निमोनिया के भी लक्षण दिखाई देते हैं।

चित्र क्र.3. फफूंद से संक्रमित मूंगफली चारा

आकस्मिक बीमारियाँ

1. अस्पिरेशन निमोनिया

यह बीमारी पशुओं में चारा, पानी, दवाई अथवा जुगाली के श्वसन मार्ग में चले जाने से होती है। ऐसी स्थिति साधारणतया अन्न नली में यदि कोई अवरोध हो तो उत्पन्न हो सकती है। साथ ही किसी पशु को यदि जबरदस्ती दवाई पिलाने की कोशिश की जाए तो ऐसे में कई बार वह दवाई भोजन नलिका में न जाकर श्वसन मार्ग में चली जाती है, जिससे फेफड़ों में अस्पिरेशन निमोनिया हो जाता है। इस बीमारी में खान–पान में कमी, दुर्बलता व श्वास लेने में तकलीफ जैसे लक्षण दिखाई देते हैं तथा फेफड़ों में गांठे अथवा फोड़े हो जाते है जिसमें जीवाणुओं के संक्रमण के कारण काफी मात्रा में बदबूदार मवाद होता है (चित्र क्र. 4)।

चित्र क्र.4. अस्पिरेशन निमोनिया से ग्रस्त ऊँट के फेफड़ों में बदबूदार मवाद

विभिन्न प्रसार गतिविधियों का ऊँटों के संरक्षण में योगदान

संजय कुमार, वैज्ञानिक, एस. के. घोरुई, प्रधान वैज्ञानिक
एवं एन. वी. पाटिल, निदेशक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट के विभिन्न पहलुओं से संबंधित जानकारी यथा–उष्ट्र प्रजनन, उष्ट्र अनुवांशिकी, उष्ट्र के विभिन्न नस्लों की विशेषताएं, ऊँट के प्रमुख रोग एवं उनके रोकथाम के उपाय, नवजात उष्ट्र बच्चों की देखभाल, उष्ट्र दूध की विशेषताएं, उष्ट्र दूध के विभिन्न उत्पाद आदि पर पुस्तिका, विस्तार पत्रक, तकनिकी बुलेटिन आदि छपवा कर किसानों को वितरित किया जाता है। इन प्रसार सामग्रियों को विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम, किसान मेला एवं प्रदर्शनी और माध्यमों द्वारा किसानों तक पहुंचाया जाता है।

प्रसार के विभिन्न माध्यमों का उपयोग कर किसी भी विषय या जानकारी को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचा कर उन्हें उस विषय के प्रति शिक्षित करना ही प्रसार शिक्षा/प्रसार गतिविधि है।

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र उष्ट्र पालन से संबंधित सूचना, ज्ञान और कौशल को प्रसार के विभिन्न माध्यमों से आम लोगों तक संप्रेषित करता है जिसका प्राथमिक उद्देश्य उष्ट्र पालन व उष्ट्र व्यवसाय से जुड़े लोगों को तेजी से परिवर्तित होती सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उष्ट्र पालन को बढ़ाने में और उसके संरक्षण में सहायता करना है ताकि उष्ट्र पालन के प्रति लोगों का रुझान बढ़े। केन्द्र ऊँटों के विभिन्न पहलुओं पर शोध कर ऊँटों का संरक्षण एवं उष्ट्र पालन को बढ़ावा देता है, अपने विभिन्न प्रसार गतिविधियों के माध्यम से ऊँटों के संरक्षण में अधिकाधिक योगदान दे रहा है।

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र जो विभिन्न प्रकार की प्रसार गतिविधियों के माध्यम से उष्ट्र पालन से सम्बंधित जानकारी आम लोगों को उपलब्ध करा रहा है जिसका विस्तार से विवरण इस प्रकार है :–

1. विभिन्न स्थानों पर प्रसार शिविर एवं किसान गोष्ठी का आयोजन करना

केंद्र इस गतिविधि या कार्यक्रम के तहत अलग–अलग स्थानों पर जैसे शहरों या कस्बों के स्कूल – कॉलेज में, आदिवासी उप योजना के तहत आदिवासी इलाकों के गांव में, मेरा गांव मेरा गौरव कार्यक्रम के तहत आसपास के चुने हुए गांव में तथा संस्थान की स्थापना दिवस या अन्य आयोजनों के मौके पर विभिन्न गांवों में प्रसार शिविर लगाता है। इन कार्यक्रमों में किसानों एवं स्कूल–कॉलेज के विद्यार्थियों को उष्ट्र पालन, उष्ट्र उष्ट्र दूध एवं दुग्ध उत्पाद, उष्ट्र के हड्डी, चमड़े एवं बालों के उत्पादों इत्यादि के बारे में जानकारी मुहैया कराई जाती है। स्कूल के छात्र–छात्राओं और पुरुष व महिला किसानों के लिए ऊँटों से संबंधित विभिन्न तरह की प्रतियोगिताएँ कराई जाती हैं एवम उन्हें पुरस्कृत भी किया जाता है ताकि वे उष्ट्र पालन के प्रति आकर्षित हो सकें। हाल के दिनों में केंद्र द्वारा डूंगरगढ़, सरेरा, लाखुसर, मोतीसर, गाढ़वाला इत्यादि गांवों के स्कूल एवं पंचायत भवनों में प्रसार शिविर लगाया गया। इन शिविरों में किसान गोष्ठी के माध्यम से विशेषज्ञों द्वारा ऊँट के विभिन्न पहलुओं पर जानकारी दी गई ताकि उष्ट्र पालन के प्रति लोगों का रुझान बढ़े और अधिक से अधिक लोग उष्ट्र पालन के व्यवसाय से जुड़ें। केंद्र द्वारा आदिवासी उप योजना के तहत उदयपुर, प्रतापगढ़, डूंगरपुर, बांसवाड़ा एवं सिरोही जिले के गांव में प्रसार शिविर का आयोजन किया गया जिसमें काफी संख्या में आदिवासी पुरुष एवं महिला कृषक उष्ट्र पालन के आधुनिक तकनीक एवं विभिन्न शोध के बारे में शिक्षित किए गए।

2. राज्य या राज्य के बाहर लगने वाले किसान मेलों, पशु मेलों या कृषकों से संबंधित अन्य मेलों या प्रदर्शनियों में राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र द्वारा स्टाल लगाकर सहभागिता

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र राज्य या राज्य के बाहर लगने वाले किसान मेला, पशु मेला या कृषकों से संबंधित अन्य मेलों या प्रदर्शनियों में स्टाल लगाकर सहभागिता द्वारा लोगों को ऊँट के विभिन्न पहलुओं पर जानकारी देकर ऊँटों के संरक्षण में भरपूर योगदान दे रहा है। किसानों से संबंधित मेलों या प्रदर्शनियों में केंद्र अपने स्टाल पर अपने विभिन्न अनुसंधानों को प्रदर्शित करता है। उष्ट्र दूध एवं दुग्ध उत्पाद, उष्ट्र चमड़े, हड्डी एवं बाल के विभिन्न उत्पादों के बारे में अधिकाधिक जानकारी उपलब्ध कराई जाती है साथ ही इन मेलों या प्रदर्शनियों में उष्ट्र दुग्ध एवं दुग्ध उत्पादों को आमजन के लिए उपलब्ध करवाई जाती है। अधिक से अधिक लोगों तक ऊँट उपयोगिता के बारे में जानकारी देने के लिए उष्ट्र बाल के उत्पाद, उष्ट्र चमड़े के उत्पाद एवं उष्ट्र हड्डी के उत्पादों को प्रदर्शित भी किया जाता है। हाल के दिनों में केंद्र ने नागपुर में आयोजित कृषि वसंत मेला, दिल्ली में कृषि उन्नति मेला, सादड़ी पाली में आयोजित मारवाड़ कैमल कल्चरल फेस्टिवल, राष्ट्रीय भेड़ अनुसंधान संस्थान (अविकानगर) में आयोजित किसान मेला, काजरी (जोधपुर), लूणकरणसर एवं राजुवास (बीकानेर) आदि स्थानों पर आयोजित कृषि मेले में सम्मिलित होकर अपने अनुसंधान एवं उष्ट्र पालन के बारे में किसानों एवं आमजनों को जानकारी उपलब्ध कराई गई और अधिक से अधिक लोगों को उष्ट्र पालन हेतु प्रेरित किया। हर वर्ष आयोजित होने वाली अंतर्राष्ट्रीय उष्ट्र उत्सव जो बीकानेर में आयोजित होता है, उसमें राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र शामिल होकर अपने अनुसंधान और उष्ट्र दुग्ध उत्पादों एवं अन्य उत्पादों के बारे में विदेशी एवं देसी पर्यटकों को जानकारी देता है जिससे देश विदेश से आने वाले पर्यटक ऊँटों के विभिन्न पहलुओं से अवगत होते हैं।

3. किसान मेला या पशुपालन से संबंधित अन्य मेलों या गतिविधियों में कृषक – वैज्ञानिक वार्ता के माध्यम से तथा वैज्ञानिकों के व्याख्यान के माध्यम से ऊँट से जुड़ें विभिन्न पहलुओं की जानकारी प्रदान करना हरेक कृषि मेला या किसान मेलों में कृषक

वैज्ञानिक संवाद और वैज्ञानिकों या विशेषज्ञों का व्याख्यान आयोजित किया जाता है जिसमें सम्मिलित होकर केंद्र के विभिन्न विषयों से संबंधित वैज्ञानिक ऊँट पालन के विभिन्न पहलुओं यथा उष्ट्र पोषण, उष्ट्र अनुवांशिकी, उष्ट्र स्वास्थ्य, ऊँट दूध एवं दुग्ध उत्पाद आदि पर विस्तार से जानकारी उपलब्ध करवाते हैं तथा किसानों द्वारा पूछे जाने वाले सवालों का तर्क संगत जवाब देते हैं। पिछले दिनों सादड़ी (पाली), कृषि वसंत नागपुर, अविकानगर आदि स्थानों पर होने वाले कृषक – वैज्ञानिक वार्ता में केंद्र के वैज्ञानिकों ने किसानों को उष्ट्र पालन के विभिन्न आयामों की अधिकाधिक जानकारी दी।

4.राष्ट्रीय एवं स्थानीय समाचार पत्रों के माध्यम से उष्ट्र पर होने वाले नए अनुसंधान और दूध की गुणवत्ता आदि के बारे में जानकारी देना

केंद्र के वैज्ञानिकों एवं अधिकारियों द्वारा उष्ट्र पर होने वाले नए अनुसंधानों, उष्ट्र दुग्ध एवं दुग्ध उत्पाद आदि के बारे में राष्ट्रीय एवं स्थानीय समाचार पत्रों के माध्यम से विभिन्न प्रकार की जानकारियां दी जाती है जिससे कि लोगों का रुझान उष्ट्र पालन एवं उष्ट्र के विभिन्न उत्पादों के बारे में बढ़े। केंद्र द्वारा उष्ट्र दूध की गुणवत्ता एवं दुग्ध उत्पादों के बारे में समय–समय पर विभिन्न समाचार पत्रों के माध्यम से लोगों को अवगत कराया जाता है। विगत कुछ और वर्षों से केंद्र ने बीकानेर शहर के लोगों को दूध एवं दुग्ध उत्पाद उपलब्ध करवाने के लिए पब्लिक पार्क स्थित वरिष्ठ नागरिक भ्रमण पथ के पास उष्ट्र दुग्ध का स्टाल लंबे समय तक लगाया तथा इसके बारे में अखबारों के माध्यम से लोगों को अवगत भी कराया गया ताकि अधिक से अधिक लोग उष्ट्र दुग्ध की गुणवता के बारे में जानें, इसका उपयोग करें।

5. उष्ट्र के विभिन्न आयामों से संबंधित जानकारियों के पोस्टर बनाकर केंद्र परिसर में लगाना एवं बाहर होने वाले किसान मेलों और कृषक गोष्ठियों में उसको प्रदर्शित करना

उष्ट्र के विभिन्न पहलुओं जैसे उष्ट्र पोषण, उष्ट्र अनुवांशिकी, उष्ट्र की उपयोगिता, उष्ट्र की विशेषताएं, उष्ट्र दूध की विशेषताएं, ऊँट के विभिन्न रोग एवं उनके रोकथाम

आदि से संबंधित जानकारी को पोस्टर के रूप में केंद्र परिसर में लगाया गया है जिससे कि केंद्र में आने वाले पर्यटक, किसान एवं अन्य आगंतुक ऊँट के समस्त पहलुओं पर जानकारी प्राप्त कर सकें। ऊँट के विभिन्न विषयों से संबंधित पोस्टर को राज्य और राज्य के बाहर होने वाले किसान मेले/प्रदर्शनियों एवं कृषक गोष्ठी में प्रदर्शित की जाती है ताकि किसान केंद्र में होने वाले अनुसंधानों एवं अन्य गतिविधियों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कर सके।

6. ऊँट के विभिन्न पहलुओं से संबंधित जानकारी की पुस्तिका, पर्चे, तकनीकी बुलेटिन आदि बनाकर वितरित करना

ऊँट के विभिन्न पहलुओं से संबंधित जानकारी यथा उष्ट्र प्रजनन, उष्ट्र अनुवांशिकी, उष्ट्र के विभिन्न नस्लों की विशेषताएं, ऊँट के प्रमुख रोग एवं उनके रोकथाम के उपाय, नवजात उष्ट्र बच्चों की देखभाल, उष्ट्र दूध की विशेषताएं, उष्ट्र दूध के विभिन्न उत्पाद आदि पर पुस्तिका, पर्चे, तकनीकी बुलेटिन आदि छपवा कर किसानों को वितरित की जाती है। इन प्रसार सामग्रियों को विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम, किसान मेला एवं प्रदर्शनी और माध्यमों द्वारा किसानों तक पहुंचाया जाता है।

7. रेडियो चौपाल या रेडियो वार्ता के माध्यम से तथा टेलीविजन के माध्यम से किसानों तक उस संबंधित जानकारी पहुंचाना

रेडियो चौपाल या रेडियो वार्ता के माध्यम से तथा स्थानीय एवं राष्ट्रीय टेलीविजन चौपाल के माध्यम से केंद्र के वैज्ञानिक एवं संस्थान के अधिकारी उष्ट्र के विभिन्न पहलुओं पर जानकारी मुहैया कराते हैं जो प्रसार में सहायक हो कर उष्ट्र के संरक्षण में योगदान देता है। यहां तक कि डिस्कवरी एवं नेशनल ज्योग्राफिकल चैनल द्वारा भी केंद्र की गतिविधियों के बारे में कार्यक्रम प्रसारित हुए हैं।

8. केंद्र में आने वाले पर्यटकों एवं आगंतुकों के लिए केंद्र में विभिन्न प्रकार की जानकारी उपलब्ध कराना

केंद्र में आने वाले पर्यटकों एवं आगंतुकों के लिए केंद्र में विभिन्न प्रकार की जानकारी उपलब्ध करवाई गई है तथा उष्ट्र संग्रहालय में ऊँटों से बनने वाले विभिन्न उत्पादों को प्रदर्शित किया गया है ताकि अधिक से अधिक लोग इन उत्पादों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें। इसके अलावा संग्रहालय में केंद्र की विभिन्न शोध गतिविधियों एवं अन्य गतिविधियों के बारे में जानकारी दी गई है। उष्ट्र मिल्क पार्लर के माध्यम से ऊँटनी के दूध एवं इसके विभिन्न उत्पादों को पर्यटकों एवं आमजन तक पहुंचाया जाता है साथ की लोग ऊँटनी के दूध एवं इसके दुग्ध उत्पादों के बारे में विस्तार से अवगत हो सके।

पशु चिकित्सा अनुसंधान के क्षेत्र में स्टेम कोशिका : एक परिचय

मुहम्मद मतीन अंसारी, वैज्ञानिक एवं राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

स्टेम सेल ऐसी अविकसित कोशिकाएं हैं, जिनमें शरीर के दूसरे अंग और अन्य प्रकार की कोशिकाओं में बदलने की यानी विकसित होने की क्षमता पाई जाती है। यह कोशिकाएं शरीर के अंगों की कोशिकाओं की मरम्मत के लिए पाई जाती है और हम इसका इस्तेमाल बाहर से (प्रत्यारोपण करके) भी कर सकते हैं।

आम तौर पर शरीर में पाई जाने वाली कोशिकाएं दूसरी कोशिकाओं में नहीं बदलती हैं और अपने जैसी कोशिका बनाने की क्षमता भी बहुत सीमित होती है। अपनी अनूठी क्षमता की वजह से स्टेम कोशिकाओं (मूल कोशिका/स्टेम सेल) पर पिछले दो दशकों से गहन अध्ययन/अनुसंधान किया जा रहा है।

स्टेम सेल ऐसी अविकसित कोशिकाएं हैं, जिनमें शरीर के दूसरे अंग और अन्य प्रकार की कोशिकाओं में बदलने की यानी विकसित होने की क्षमता पाई जाती है। यह कोशिकाएं शरीर के अंगों की कोशिकाओं की मरम्मत के लिए पाई जाती है और हम इसका इस्तेमाल बाहर से (प्रत्यारोपण करके) भी कर सकते हैं। यानी अगर त्वचा की कोशिका खराब हो गई, तो इसकी मरम्मत त्वचा की स्टेम कोशिका द्वारा की जा सकती है या अगर पुराने घाव भर नहीं रहे हैं तो भी इसका इस्तमाल पुराने घावों को भरने के लिए किया जा सकता है। स्टेम सेल ऐसे अविकसित कोशिकाएं हैं जिनमें विकसित कोशिका के रूप में विशिष्टता अर्जित करने की क्षमता होती है। इन कोशिकाओं का स्वस्थ कोशिकाओं को विकसित करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। स्टेम कोशिका सम्बंधित अनुसंधान के लिए वर्ष 2007 और 2012 मे नोबल प्राइज मिला था। स्टेम सेल को वैज्ञानिक प्रयोग के लिए स्त्रोत के आधार पर भ्रूणीय, शिशु, वयस्क तथा इनडयूसड प्लूरीपोटेन्ट स्टेम कोशिका में बांटा जा सकता है। चित्र 1.

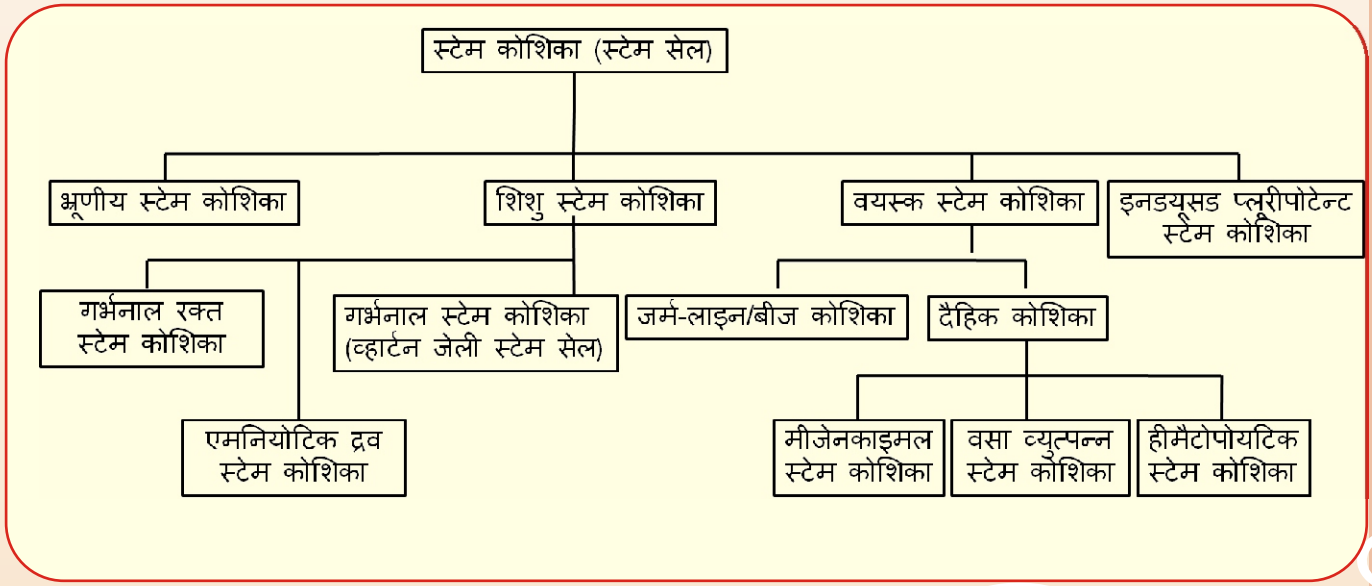

चित्र 1. स्टेम कोशिकाओं के प्रकार

स्टेम कोशिकाओं की विशेषताएं

स्टेम कोशिकाओं में निम्नलिखित दो महत्वपूर्ण विशेषताएं होती हैं :–

1. स्व–नवीकरण : ये कोशिकाएं लम्बे समय तक स्व–विभाजित होकर अपने नवीकरण के लिए सक्षम होती है।

2. विशिष्टीकरण : यह अविकसित कोशिकाएं शरीर की दूसरी विकसित कोशिकाओं में बदलने की क्षमता रखती हैं और इस क्षमता को विशिष्टीकरण कहते हैं।

स्टेम कोशिकाओं में विशिष्टीकरण क्षमता निम्न लिखित प्रकार की हो सकती है–

क) टोटीपोटेंनट (सम्पूर्ण–विशेषीत कोशिका):– टोटीपोटेंनट कोशिकाओं मे विशिष्टीकरण क्षमता सबसे जादा पाई जाती हे एवं इन कोशिकाओं में शरीर की किसी भी कोशिका में बदलने की क्षमता होती है यानी ये पूरे शरीर में भी बदल सकती है एवं भ्रूण की बाहरी झिल्ली भी बना सकती है। टोटीपोटेंनट कोशिकाएं शुक्राणु एवं अंडे के मिलन से बनती है एवं इस निषेचित अंडे की कोशिकाओं में अगले कुछ कोशिका विभाजन (4–8) तक यह विशेषता बनी रहती है।

ख) प्लुरिपोटेंनट :– प्लुरिपोटेंनट स्टेम कोशिका भी टोटीपोटेंनट कोशिका की तरह शरीर की किसी भी कोशिका में बदलने की क्षमता रखती है लेकिन इसमें भ्रूण की बाहरी झिल्ली बनाने की क्षमता नहीं होती है। इन कोशिकाओं का सबसे अच्छा उदाहरण भ्रूणीय स्टेम कोशिकाए होती है।

ग) मल्टीपोटेंनट (बहु–विशेषीकृत कोशिका/बहु–सक्षम) :– यह कोशिकाए शरीर की कई प्रकार की कोशिकाओं में बदलने की क्षमता रखती है लेकिन शरीर की सारी कोशिकाएं नहीं बना सकती। मीजेनकाइमल स्टेम कोशिकाओं में यह (मल्टीपोटेंनट) क्षमता होती है। घ) यूनीपोटेंट (एकल–विशेषीकृत कोशिका /एकल–सक्षम) :– यूनीपोटेंनट कोशिकाएं किसी एक प्रकार की कोशिकाओं मे ही बदल सकती है जैसे शुक्राणु बनाने वाली एकल–विशेषीकृत कोशिका सिर्फ शुक्राणु में ही बदल सकती है। त्वचा बनाने वाली कोशिकाएं भी यूनीपोटेंनट कोशिका होती है क्योंकि यह सिर्फ त्वचा की कोशिकाओं को ही बना सकती है ।

स्टेम कोशिकाओं को स्त्रोत के आधार पर निम्नलिखित प्रकार से बांटा जा सकता है :–

1. भ्रूणीय स्टेम कोशिका :– भ्रूणीय स्टेम कोशिकाएं प्लुरिपोटेंनट स्टेम कोशिका होती है, इसमें भ्रूण की बाहरी झिल्ली बनाने की क्षमता को छोड़ कर शरीर की किसी भी कोशिका में बदलने की क्षमता होती है। ये कोशिकाएं प्रयोगशाला में निषेचित अंडे के अगले कोशिका विभाजन के 5–9 दिन (ब्लास्टोसिस्ट अवस्था) से निकाली जा सकती है।

2. शिशु स्टेम कोशिका :– ये स्टेम कोशिकाएं नवजात बच्चों से जन्म के समय निकाली जाती है एवं ये कोशिकाएं निम्नलिखित प्रकार की हो सकती है–

गर्भनाल स्टेम कोशिका (व्हार्टन जेली स्टेम सेल): – ये स्टेम कोशिकाएं गर्भनाल के अंदर पाए जाने वाली व्हार्टन जेली में पाई जाती है। इन कोशिकाओं को प्रयोगशाला में व्हार्टन जेली से उत्पन्न कर सकते हैं या जन्म के समय गर्भनाल/व्हार्टन जेली को क्रायो–संरक्षण (क्रायो–प्रिजर्वेशन) तकनीक से तरल नाइट्रोजन (LN2) में –196°C तापमान पर सुरक्षित रख सकते हैं एवं जरुरत पड़ने पर स्टेम कोशिकाओं को पहले की तरह प्रयोगशाला में निकाल सकते हैं और उपयोग में ले सकते हैं। ये कोशिकाएं एक प्रकार की मीजेनकाइमल स्टेम कोशिकाएं हैं एवं इनमे मलटीपोटेंनट/बहु–विशेषीकृत कोशिका की क्षमता होती है।

गर्भनाल रक्त स्टेम कोशिका :– प्रसव के बाद गर्भनाल और झिल्ली (प्लेसेंटा) में पाए जाने वाले रक्त में भी स्टेम कोशिकाएं पाई जाती है। इन्हें गर्भनाल रक्त स्टेम कोशिका कहते हैं। व्हार्टन जेली स्टेम कोशिका की तरह इन कोशिकाओं को भी क्रायो–संरक्षण तकनीक से भविष्य के लिए सुरक्षित रख सकते हैं और जरुरत पड़ने पर इन स्टेम कोशिकाओं को और उपयोग मे ले सकते हैं।

एमनियोटिक द्रव स्टेम कोशिका :– ये कोशिकाएं एमनियोटिक द्रव में पाई जाती है और इनमें मीजेनकाइमल स्टेम कोशिका की तरह मलटीपोटेंनट क्षमता पाई जाती है।

3. वयस्क स्टेम कोशिका :–

क) दैहिक कोशिका

हीमैटोपोयटिक स्टेम कोशिका : – अस्थि–मज्जा में कई प्रकार की कोशिकाएं पाई जाती हैं और हीमैटोपोयटिक स्टेम कोशिकाए अन्य कोशिकाओं के साथ अस्थि–मज्जा में पाई जाती हैं। हीमैटोपोयटिक स्टेम कोशिका हीमैटोपोइएसिस की प्रक्रिया के माध्यम से सभी रक्त कोशिकाओं को जन्म देती हैं।

मीजेनकाइमल स्टेम कोशिका :– हीमैटोपोयटिक स्टेम कोशिकाओं की तरह ये कोशिकाएं भी आम तौर पर अस्थि–मज्जा से निकाली जाती हैं। ये कोशिकाए अस्थि–मज्जा कोशिकाओं का बहुत छोटा सा अंश (मज्जा कोशिकाओं की लगभग कुल संख्या के 0.001–0.01%) होती है। मीजेनकाइमल स्टेम कोशिकाएं सिर्फ अस्थि–मज्जा की ही अनूठी विशेषता नहीं है। ये कोशिकाएं वसा आदि ऊतक से भी निकाली जा सकती है। मीजेनकाइमल स्टेम कोशिकाओं में सबसे अधिक अध्ययन/शोध अस्थि–मज्जा से निकली स्टेम कोशिकाओं पर ही हुआ है।

वसा व्युत्पन्न स्टेम कोशिका :– ये स्टेम कोशिकाएं वसा से निकाली जाती है और ये एक प्रकार की बहु–विशेषीकृत कोशिका होती है यानी इनमें कई प्रकार की कोशिकाओं में बदलने की क्षमता होती है। ऊँटों में पहली बार वर्ष 2013 मे कूबड़ के वसा ऊतकों से स्टेम सेल की खोज की गई थी।

जर्म–लाइन/बीज कोशिका :– ये स्टेम कोशिकाएं बीज/शुक्राणु मे बदलने की क्षमता रखती है और ये एक प्रकार की एकल–विशेषीकृत कोशिका होती है यानी ये कोशिकाएं सिर्फ एक प्रकार की कोशिका ही बना सकती हैं। बीज कोशिकाएं अंडकोष में पाई जाने वाली एक प्रकार की झिल्ली में पाई जाती हे और स्व–विभाजित होकर अपने जैसी कोशिका बनाती है और जरुरत पड़ने पर शुक्राणु मे बदल जाती है।

4. इनडयूसड प्लूरीपोटेन्ट स्टेम कोशिका :– इनडयूसड प्लूरीपोटेन्ट स्टेम कोशिका एक प्रकार से प्लूरीपोटेन्ट स्टेम कोशिका ही होती है जो वयस्क (विकसित) कोशिकाओं से अविकसित स्टेम कोशिका उत्पन्न कर करके बनाते हैं। इनडयूसड प्लूरीपोटेन्ट स्टेम कोशिकाएं शरीर में प्राकृतिक रूप से नहीं पाई जाती और ये वयस्क (विकसित) कोशिकाओं से प्रयोगशाला में ही बनाई जा सकती हैं जैसे त्वचा की विकसित कोशिकाओं को फिर से स्टेम कोशिकाओं में बदल देने से ये इनडयूसड प्लूरीपोटेन्ट स्टेम कोशिका कहलाएगी इन कोशिकाओं पर शोध के लिए वर्ष 2012 में जॉन गुरडन और शिन्या यामानाका को नोबल प्राइज मिला था।

वर्तमान स्थिति एवं भविष्य सम्भावना

कोशिका चिकित्सा के अंतर्गत ऐसी कोशिकाओं का अध्ययन किया जाता है जिसमें वृद्धि, विभाजन और विभेदन कर नए ऊतक बनाने की क्षमता हो। ऐसी क्षमता स्टेम कोशिकाओं में ही पाई जाती है। पशु चिकित्सा अनुसंधान के क्षेत्र में स्टेम कोशिकाओं का उपयोग भिन्न–भिन्न रोगों (चित्र. 2) के उपचार के लिए किया जा सकता है। स्टेम कोशिकाओं की अनूठी क्षमता के कारण भविष्य में स्टेम कोशिकाओं का उपयोग पशुओं में ऐसे रोगों के उपचार में किया जा सकता जिनका इलाज पारंपरिक दवाइयों से नहीं हो पाता है।

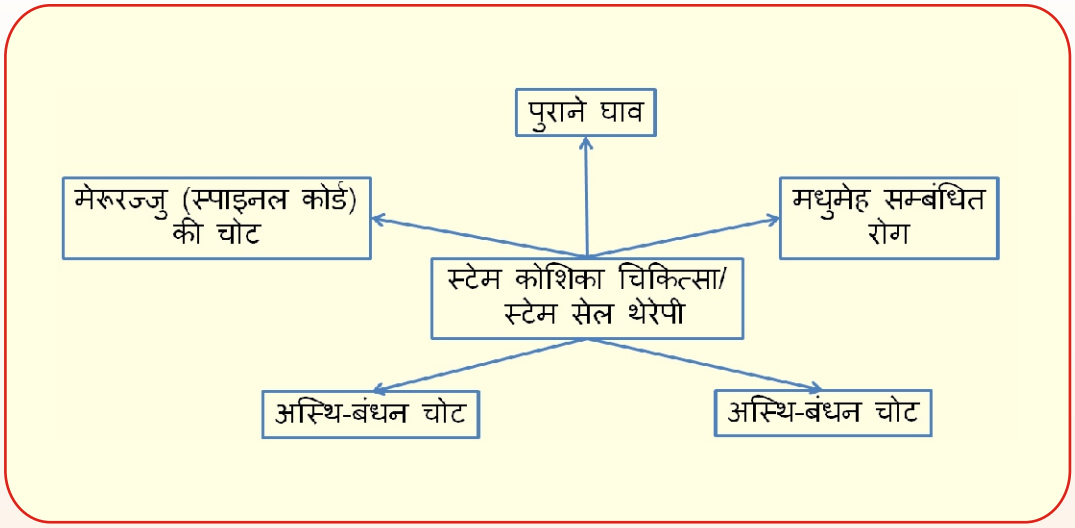

संदर्भ :–

- डॉ.मुहम्मद मतीन अंसारी "Therapeutic potential of canine bone marrow derived mesenchymal stem cells in diabetic rat wound healing" M.V.Sc- Thesis; 2013:
- भाकृअनुप–भारमीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान(ICAR-IVRI).
- https://hi.wikipedia.org/wiki/स्टेम_कोशिका

एथनोवेटेरिनरी चिकित्सा पद्धतियों का वैज्ञानिक मानकीकरण

एफ.सी.टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, ए.के.नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक, आर.के.रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक
एवं नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

भारत औषधीय वनस्पति में एक सम्पन देश है तथा प्रजातीय, आवासीय एवं अनुवांशिक जैव–विविधता यहाँ पाई जाती है। हर तरह की कृषि जलवायु यहाँ पर होती है। छोटी बीमारियों के उपचार एवं निजी स्वास्थ्य रख–रखाव में हर्बल उपचार अधिक प्रचलन में है। बाजार की मांग इतनी है कि कई पौधे विलुप्त होते जा रहे हैं, इसलिए इस ज्ञान को बचाए रखने के लिए तुरंत दस्तावेज की जरुरत है। भारत में पाई जाने वाली कुल 17,000 वनस्पति प्रजातियों में से केवल केवल 2000 प्रजातियाँ ही आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध इत्यादि उपचार प्रणाली में उपयोग में ली जाती हैं।

विकासशील देशो में स्वास्थ्य के लिये पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों का उपयोग बहुतायत देखा गया है। विकसित देश भी वनस्पतिक एक्सट्रेक्ट अथवा वनस्पति आधारित अनेकों दवाएं बना चुके हैं। वर्ष 1940 में प्रतिजैविक दवा (एंटीबायोटिक) आने के बाद भी अभी तक दुनियां के 80 प्रतिशत लोग इन चिकित्सा पद्धतियों पर विश्वास करते हैं। पारंपरिक चिकित्सा चीन, भारत, जापान, पाकिस्तान, श्री लंका तथा थाईलैंड में अधिक प्रचलित है। सभ्यता के आरंभ से वानस्पतिक दवाओं का उपयोग स्वास्थ्य संरक्षण एव बीमारी उपचार के लिये किया जा रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुमान अनुसार विश्व की तीन चौथाई जनसंख्या बीमारियों के उपचार में औषधीय वनस्पति या अन्य पारंपरिक दवाओं का इस्तेमाल करती है। इस शताब्दी में हम "जीन– थेरैपी" की संभावनाओं की तरफ अग्रसर है, फिर भी विश्वभर में हर्बल दवाइयों का बाजार 7–15% वार्षिक बढ़ोतरी कर रहा है। पौधे हजारों सालों से विश्वभर में कई पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों का आधार रहे हैं तथा मानवता को नए उपचार प्रदान करते रहे हैं । यह दवाएं पहले अशोधित निष्कर्ष के रूप में रही हैं तथा अब नई दवा खोज (नावेल ड्रग डिस्कवरी) का आधार हैं।

भारतवर्ष में अनेक स्वास्थ्य प्रणालियां जैसे कि आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध, होमियोपैथी, नेचुरोपैथी हैं तथा 70 प्रतिशत लोग इन गैर–एलोपैथिक दवाओ का इस्तेमाल करते हैं। हर्बल सूत्रण भारत के देहाती एवं शहरी इलाकों में दवा की सुरक्षित प्रकृति के कारण प्रचलित है। कई विकसित देश जैसे कि जर्मनी, फ्रांस, कनाडा, अमेरीका एवं चीन पौधों के प्रमाणित नैदानिक प्रभाव वाले मानक वनस्पतिक निष्कर्षो का पंजीकरण हर्बल दवा अथवा खाद्य अनुपूरक के रूप में करवा रहे हैं। यह भी तथ्य है कि भारत देश एक विशाल प्रकृतिक औषधीय वनस्पति का मूल संसाधन है लेकिन असन्तोषजनक गुणवत्ता नियंत्रण एवं पंजीकरण प्रणाली के कारण हम विश्व बाजार में इसका लाभ नहीं उठा पा रहे हैं।

भारतवर्ष में औषधीय वनस्पति सम्पदा

भारत औषधीय वनस्पति में एक सम्पन देश है तथा प्रजातीय, आवासीय एवं अनुवांशिक जैव–विविधता यहाँ पाई जाती है। हर तरह की जलवायु यहाँ पर होती है छोटी बिमारियों के उपचार एवं निजी स्वास्थ्य रख–रखाव में हर्बल उपचार अधिक प्रचलन में है। बाजार की मांग इतनी है कि कई पौधे विलुप्त होते जा रहे है, इसलिए इस ज्ञान को बचाए रखने के लिए तुरंत दस्तावेज की जरुरत है। भारत में पाई जाने वाली कुल 17,000 वनस्पति प्रजातियों में से केवल केवल 2000 प्रजातियाँ ही आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध इत्यादि उपचार प्रणाली में उपयोग में ली जाती हैं। एक अनुमान अनुसार विश्व की 250000

वनस्पति प्रजातियों में से लगभग आधी उष्ण–कटिबंधीय जंगलो में मिलती हैं। इनसे प्राप्त प्राकृतिक उत्पाद अथवा रसायनिक पदार्थ, बहुमूल्य नई दवा खोजों का आधार बनते हैं। नए रसायनिक पदार्थ खोजने के अवसर अत्याधिक हैं क्योंकि अब तक सिर्फ एक प्रतिशत उष्ण–कटिबंधीय पौधों की औषधीय क्षमता पर ही अध्ययन हो सका है। भारत की सम्पन्न संस्कृति, परंपराए एवं जैव–विविधता नई दवा शोधकर्ता के लिए अनूठा अवसर प्रदान करते हैं। भारत की प्राचीन चिकित्सा पद्धति में मानव औषधि के अलावा अन्य जरुरी आयाम जैसे कि पशु चिकित्सा भी सम्मिलित है। ड्रग एवं कॉस्मेटिक एक्ट में आयुर्वेद की परिभाषा में पशु चिकित्सा को शामिल किया गया है। प्राचीन चिकित्सा प्रणाली में पशु चिकत्सा सम्बंधित कुछ विश्वसनीय किताबें भी उपलब्ध हैं– जैसे कि नकुल संहिता, पल्कप्या शास्त्र, गो–आयुर्वेद, हस्ती आयुर्वेद, बज नामा इत्यादि।

वनस्पतिक औषधि की खोज एवं मानकीकरण

वनस्पतिक औषधि का मूल्यांकन इन तीन तथ्यों से लगाया जा सकता है

1. विभिन्न सरंचना के रसायनिक पदार्थ किस दर से खोजे गए, जिसके आधार पर मानवीत अथवा कृत्रिम रसायन बने।
2. इन उत्पादों से कितनी बीमारियों का उपचार व बचाव किया गया।
3. बीमारियों के उपचार व बचाव में इन उत्पादों को कितनी प्राथमिकता दी गई।

हर्बल सूत्रण दवाएं एवं पशु खाद्य अनुपूरक को पसंद किया जाता है चूँकि इनका बेहतरीन प्रभाव, सहनीय, कम दुष्प्रभाव व विभिन्न शारीरिक अवस्थाऔं (गर्भाशय, दुधारू) में सुरक्षित, दवा प्रतिरोधकता व् अवशेष की दिक्कत का न होना व पर्यावरण–अनुकूल होते हैं।

भारत जैव–विविधता एवं पारंपरिक ज्ञान में सम्पन्न है लेकिन विश्व बाजार में हमारा योगदान न के बराबर है दवा खोज प्रक्रिया में बहुत समय एवं खर्च लगता है। बहुत समय एवं खर्चा ऐसे कई अग्रणी तत्वों में लग जाता है जो दवा खोज प्रक्रिया में सफल नहीं हो पाते। अनुमानित 5000 अग्रणी तत्वों में से केवल एक तत्व ही नैदानिक परिक्षण में व सफल हो पाता है व दवा खोज प्रक्रिया में स्वीकृत हो पाता है।

प्रणालीगत पद्धति या आयुर्वेद का संपूर्णता विज्ञान हर्बल दवा बनाने का दूसरा महफूज एवं वैज्ञानिक तरीका है जो रिवर्स औषध विज्ञान के सिद्धांत पर आधारित है। इसके अनुसार विभिन्न कोशिकाएं व बीमारीपथ, बीमारी होने का कारण होते हैं। एक तत्व बीमारी के कई टारगेट को ठीक करने में नाकामयाब हो सकता है। इसलिए बीमारियों के उपचार के लिए मिश्रित तत्वों की जरुरत पड़ती है। हर्बल निष्कर्ष में प्राकृतिक मिश्रित रसायन होते हैं जो एक साथ कई टारगेट पर पहुँच कर सह–क्रियाशील प्रभाव से असर करते हैं रिवर्स–औषध विज्ञान की योजना तीन संकीर्ण चीजें लागत, समय एवं विषाक्तता कम करने के लिए की गई नई तरह की बनावट वाले तत्वों की पहचान जो विशेष तरह के गुणों वाले होते हैं, नए रासायनिक वास्तविकता को दर्शाते हैं तथा दवा मानकीकरण के काम आते हैं।

रिवर्स– औषध विज्ञान उन देशो में संभव है जहा बहुवादी स्वास्थ्य सेवा प्रचलित हो व मजबूत नैदानिक व प्रयोगशाला दस्तावेज बन सके। वानस्पतिक दवा खोज में बहु–विषयक दृष्टिकोण व परीक्षण के कई तरीके शामिल किये जाते हैं। यह प्रक्रिया वनस्पतिज्ञ या वनस्पति परिस्थिति वैज्ञानिक से शुरू होती है जो वनस्पति का संग्रह एवं शिनाख्त करता है। वनस्पति संग्रहण में ज्ञात जैविक प्रक्रिया के पौधे जिनके सक्रिय रसायनिक पदार्थ का पता नहीं होता या फिर वर्गिकीय अनियमित तरीके से बड़ी जाँच योजना के लिए किया जाता है। वनस्पति रसायनशास्त्री इन पौधों से निष्कर्ष निकालता है। इन निष्कर्षो को जैविक प्रक्रिया के लिए जांचा जाता है, इसके बाद सक्रिय रसायन को अलग करने व पहचानने का काम होता है। वनस्पति दवा खोज में आणविक लक्ष्य को जाँचने के लिए आणविक जीव–विज्ञान जरुरी हो गया है।

वैश्विक बाजार में प्रतिस्पर्धा बनाने के लिए भारतीय दवाओं की मानकता पर विशेष ध्यान देने की जरुरत है। इसमें गुणवत्ता नियंत्रित औषधीय पौधों की पैदावार, प्रमाणित

योग्य कच्चे माल, अयोग्य अनुपयुक्त तत्व, सुक्ष्मदर्शी जाँच, निष्कर्ष मूल्य, क्रोमैटोग्राफी रूपरेखा, कीटनाशक अवशेष, भारी धातु अभिज्ञान इत्यादि के मानकों की जरुरत हैं। वैश्विक मापदंड व अन्तर्राष्ट्रीय फार्मकोपियां जैसे कि हर्बल बी.पी., जापानीज हर्बल, आयुर्वेदिक फोर्मुलेट्री ऑफ इंडिया के अनुसार मानकता को बनाया जा सकता है। इसके इलावा आधुनिक एवं प्राचीन ज्ञान का संयोजन करना भी जरुरी है।

दवा मानकीकरण के लिए निम्नलिखित तकनीकी कार्यक्रम अपनाना चाहिए –

1. पौधों का चयन करना
2. इनविट्रो परिस्थिति में निष्कर्षो का प्रारंभिक अनुवीक्षण
3. सह–क्रियाशीलता के लिए मिश्रण से प्रारूप बनाना
4. श्रेष्ठ प्रारूप का चयन व इसका मानकीकरण करना
5. गुणकारक खुराक का निर्धारण करना
6. पादप–रसायन की रुपरेखा एवं मानकीकरण
7. चिन्हक तत्व अथवा सक्रिय अवयव का पृथक्करण, अभिज्ञान एवं निष्कर्षण
8. दुष्प्रभाव एवं बचाव जाँच
9. योजनापूर्ण विशेष अध्ययन
10. स्थिरता अध्ययन

अध्ययन के लिए वनस्पति का चयन बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसके लिए साहित्य का अनुवीक्षण आवश्यक है। भारत के "जैव–विविधता नियम 2003"(प्रकाशित 24 मार्च 2004) के अनुसार वह व्यक्ति जो भारत का निवासी नहीं है, उसे बायोलॉजिकल संसाधन या संबंधित ज्ञान को शोध अथवा व्यवसायिक उपयोग के लिए जैव–विविधता अथॉरिटी से फार्म–1 भरकर मंजूरी लेनी अनिवार्य है। जैव–विविधता अधिनियम 2002'के अनुसार भारत मूल के निवासी को इस मंजूरी की जरुरत नहीं है लेकिन इन निवासियों को राज्यों के बायोलॉजिकल बोर्ड को सूचित करना जरुरी है।

दवा खोज के लिए वानस्पतिक सामग्री का प्रमाणीकरण अति आवश्यक है। वानस्पतिक सामग्री को इकट्ठा करने के सही तरके का दस्तावेज तैयार करना भी जरूरी है। वानस्पतिक सामग्री को सुखाने के तरीके से भी रासायनिक गुणों में बदलाव आ जाता है ।

भारत पशु स्वास्थ्य के क्षेत्र में स्वदेशी तकनीकी ज्ञान से सम्पन्न है। इसके मानकीकरण के लिए कोई स्थायी प्रोटोकॉल नहीं है। इनका पहले प्री–क्लिनिकल परीक्षण गुणवता व सुरक्षा के लिए करना चाहिए। लम्बे समय से लगातार स्वदेशी दवा का इस्तेमाल ही दवा के सुरक्षित होने का प्रमाण होता है। लेकिन पारंपरिक चिकित्सिक, लम्बे समय से स्वदेशी दवा का इस्तेमाल होने से कुछ दुष्प्रभाव जैसे म्युटा–जिनिसिटी आदि के बारे में नहीं जानते, इसलिए इसका सुरक्षा अथवा विषाक्तता परीक्षण करना जरुरी है। तत्पश्चात नैदानिक योग्यता एवं मानकीकरण, इन–विट्रो एवं इन–विवो परिक्षण, अन्ततः दोबारा परिणाम देने वाले एवं एक समूह से दूसरे समूह कम अंतर वाले उत्पाद का मानकीकरण, एवं गुणवता, सुरक्षा व क्षमता के लिए खरे उत्पाद का निर्माण करना है।

आयुष– स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने अलग विभाग बनाकर भारतीय चिकित्सा पद्धति को स्वतंत्र पहचान दी। आयुष क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली अधिकांश दवाएं औषधीय पौधे से बने होते हैं। विभाग ने औषधीय पौधों की खेती को बढ़ावा देने और गुणवत्ता के कच्चे माल की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय औषधीय पादप बोर्ड का गठन किया है ।

वैज्ञानिक अनुसंधान और शिक्षा के प्रोत्साहन, दवाओं की गुणवत्ता के मानक सुनिश्चित करने, अच्छी प्रयोगशालाओं की प्रथा विकसित करने, अच्छी विनिर्माण पद्धतियों के बाद शिक्षा का विनियमन, जिला एलोपैथिक अस्पतालों में आयुंष विंग और राज्य सरकार के सहयोग से क्लिनिकों की स्थापना का प्रयास, स्वास्थ्य मेला और अन्य जानकारी, शिक्षा और संचार के माध्यम से विभाग जागरूकता पैदा करने में मदद कर रहा है।

पशुओं में यूरिया की विषाक्तता: उपचार एवं बचाव

अमिता रंजन, सहायक आचार्य, पशु भेषज एवं विष विज्ञान विभाग
राजुवास, बीकानेर

मूलतया यूरिया विषाक्तता के लक्षणों में स्पष्ट संकेतक के रूप में पेट फूलना, आफरे जैसी स्थिति, पेट दर्द के लक्षण, तेजी से सांस लेना, कमजोरी के लक्षण, पशुओं का हिंसक हो जाना, कान एवं चेहरे की मांसपेशियो में ऐंठन, फेनिल लार का श्रावित होना, दांतों का पिसना इत्यादि हैं।

परिचय

किसानों एवं पशुपालकों द्वारा यूरिया का उपयोग फसलों में उर्वरक के रूप में एवं पशुओं के राशन में फीड सप्लीमेंट के रूप में किया जाता है। जुगाली करने वाले पशुओं के संपूर्ण राशन में 2–3 प्रतिशत भाग एनपीएन (गैर प्रोटीन नाइट्रोजन) के रूप में यूरिया मिलाकर पूरा किया जाता है जिसे सर्वसुलभ एवं सस्ते प्रोटीन का विकल्प माना गया है। यूरिया रुमेन मैक्रोफ्लोरा द्वारा यूरिएज एंजाइम की उपस्थिति में विघटित होकर अमोनिया एवं जल का निर्माण करता है। पशु के शरीर में इस अमोनिया से प्रोटीन का निर्माण होता है और पशुओं को लाभ पहुँचाता है। परन्तु रुमेन में अमोनिया का स्तर एक सीमा से अधिक की वृद्धि नुकसानदायक हो सकता है। अत्यधिक अमोनिया क्रेब–साईकल को अवरोधित कर कोशिकाओं के श्वसन दर पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इस स्थिति में यूरिया के विषाक्त लक्षणों का प्रभाव केंद्रीय तंत्रिका तंत्र पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

यूरिया विषाक्तता के कारण

पशुपालकों द्वारा अक्सर यूरिया–मोलासेस मिक्सचर को जानवरों के राशन में इस्तेमाल किया जाता है, फिर भी निम्नलिखित परिस्थितियों में यूरिया की विषाक्तता पशुओं में हो सकती है :

1. अचानक या शुरुआती राशन में ही उच्च गुणवत्ता वाले यूरिया उत्पादों का उपयोग
2. यूरिया का राशन में अनियमित उपयोग
3. यूरिया–मोलासेस मिक्सचर का अधिक मात्रा में प्रयोग
4. गीले यूरिया पूरकों का उपयोग
5. पशुओं का यूरिया उर्वरक को चाटना या खाना

यूरिया विषाक्तता को प्रभावित करने वाले कारक

जुगाली करने वाले पशुओं में इसके विषाक्त लक्षणों की तीव्रता को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं :

1. पशुओं द्वारा खाए जाने वाले राशन की संरचना एवम् मात्रा : यदि पशु के आहार में कैलोरी (ऊर्जा) की कमी हो तो यूरिया के उपापचय की क्षमता घट जाती है। मूल रूप से 0.1 ग्राम यूरिया/किग्रा शारीरिक भार प्रतिदिन या लगभग 400 किलोग्राम के वयस्क गोवंश हेतु 35–40 ग्राम यूरिया प्रतिदिन देना ही उचित है। गोवंशों हेतु 0.3–0.5 ग्राम यूरिया/किग्रा शारीरिक भार/दिन को विषकारी एवम 1.1–5 ग्राम यूरिया/किग्रा शारीरिक भार/दिन को घातक तथा जानलेवा माना गया है।

2. यूरिएज एंजाइम की उपस्थिति एवम रुमेन के पी. एच की संरचना यूरिया की विषाक्तता रुमेण में अमोनिया गैस के बनने एवम रुधिर वाहिकाओं द्वारा रक्त में अवशोषित होने की मात्रा और रुमेण के पी.एच. के स्तर पर निर्भर करती है । इसे इस प्रकार समझा जा सकता है–

क. pH<5 या pH<4 अमोनिया गैस का अमोनियम पदार्थ (जल में घुलनशील) में परिवर्तित होना। विषाक्तता के लक्षणों का अस्पष्ट होना।

ख. pH<6.2 अमोनिया गैस का घुलनशील एवं रक्त में कम अवशोषित अमोनियम पदार्थ में बदलना।

ग. pH>9 अमोनिया गैस और अमोनियम पदार्थ का अनुपात एक हो जाना । अमोनिया गैस का अवशोषण रुधिर द्वारा अधिक होना। विषाक्तता के लक्षणों का स्पष्ट दिखाई देना।

पुनः निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा अमोनिया गैस का स्तर व उसके प्रभावों को दर्शाया गया है–

अ. अमोनिया गैस की सांद्रता जब 0.8 मिली ग्राम/डेसी लीटर से अधिक हो : रक्त नलिकाओं पर विपरीत प्रभाव।

आ. जब सांद्रता 0.8–1.3 मिलीग्राम/डेसीलीटर के बीच हो : विपरीत लक्षणों का स्पष्ट प्रभाव दिखना।

इ. जब सांद्रता 5.0 मिलीग्राम/डेसीलीटर या उससे अधिक हो : पशुओं का मृत अवस्था में पाया जाना।

यूरिया विषाक्तता के लक्षण व इसकी पहचान (डायग्नोसिस)

मूलतया यूरिया विषाक्तता के लक्षणों में स्पष्ट संकेतक के रूप में पेट फूलना, आफरे जैसी स्थिति, पेट दर्द के लक्षण, तेजी से सांस लेना, कमजोरी के लक्षण, पशुओं का हिंसक हो जाना, कान एवं चेहरे की मांसपेशियो में ऐंठन, फेनिल लार का श्रावित होना, दांतों का पिसना इत्यादि हैं। गंभीर अवस्था में हृदय–गति का मंद पड़ना, नाड़ी–दर व श्वसन–दर में असमान्यता व गिरावट होना शामिल हैं। मरणासन्न अवस्था में पशु जोर–जोर से छटपटाता है एवं भिन्न–भिन्न तरह की आवाजें निकालता है। अधिकांश परिस्थितियों में जानवर यूरिया–पूरकों के बोरे या गठरी के इर्द–गिर्द ही मृतप्रायः अवस्था में पाए जाते हैं। यूरिया विषाक्तता की पहचानने हेतु निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित कर जाँच की दिशा और दशा तय की जा सकती है :

1. जानवरों के राशन में यूरिया पूरकों की उपस्थिति एवं उसके द्वारा किये गए भोजन में यूरिया की मात्रा का संभावित अनुमान लगाना
2. विषाक्तता के लक्षणों की समुचित जाँच।
3. गोवंश के मरणोपरांत तुरंत एकत्रित रक्त में यूरिया/अमोनिया के स्तर एवं रुमेन द्रव्य के pH का प्रयोगशाला में जाँच की सुविधा का उपलब्ध होना।
4. पोस्टमार्टम में मिली जानकारी का ऊपर बताये तथ्यों से तालमेल स्थापित करना।

यह तथ्य गौर करने योग्य है कि प्रभावित परन्तु केवल जीवित पशुओं से लिया गया रक्त ही अमोनिया के स्तर की समुचित मात्रा/स्तर दर्शाता है, क्योंकि मरणोपरांत रक्त में प्रोटीन का विघटन अत्यंत तीव्रता से होकर अधिकाधिक अमोनिया का उत्पादन होता है। साथ ही रक्त में अमोनिया का स्तर जाँचने हेतू, सैंपल का फ्रोजेन स्टेट (जमी हुई अवस्था) में रहना अनिवार्य है। हालाँकि पोस्टमार्टम जाँच में कोई विशेष लक्षण उभरकर सामने नहीं आ पाते, परन्तु रुमेन से अमोनिया गैस का रिसाव होना यूरिया विषाक्तता का एक प्रमुख संकेतक है।

उपचार एवं बचाव

यूरिया विषाक्तता से प्रभावित पशुओं का शीघ्रातिशीघ्र उपचार ही प्रभावी सिद्ध होता है। आफरे की स्थिति में ट्रोंकार से या पेट में चीरे लगाकर रुमेन से गैस को निष्कासित किया जाता है। प्रभावित पशुओं को उचित मात्रा में ठंडे पानी एवं विनेगर (सिरका) का सेवन कराने से लाभ मिलता है। नियमानुसार एक वयस्क गोवंश हेतु 40–45 लीटर पानी व 2–6 लीटर 5 प्रतिशत एसिटिक अम्ल (विनेगर/सिरका) का प्रयोग फलदायी सिद्ध होता है। मूलतया इससे रुमेन के पदार्थों को तनु होने व क्षारीयता प्रदान करने में सहायता मिलती है जिससे अमोनिया का उत्पादन–दर कम हो जाता है।

पशुपालकों द्वारा पशुओं को यूरिया विषाक्तता से बचाव हेतू निम्नांकित बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है:

1. पशुओं को यूरिया–पूरकों को खिलाने की शुरुआत करने से पहले शुद्ध साधारण नमक का आहार मिश्रित कर खिलाना चाहिए। धीरे–धीरे यूरिया देना शुरू करें और उसकी मात्रा धीरे– धीरे बढाएं। एक बार यूरिया पूरक देना बंद करने की स्थिति में पुनः न्यूनतम स्तर से इसकी शुरुआत करनी चाहिए।
2. गीले यूरिया पूरकों के इस्तेमाल से बचना चाहिए। बारिश के मौसम में इसका विशेष ध्यान रखें।
3. यदि पशु यूरिया–ब्लोक्स या यूरिया–श्रोत के इर्द गिर्द ही मृत–अवस्था में पाए जाएँ तो जाँच की दिशा यूरिया विषाक्तता की ओर ले जाकर अन्य प्रभावित पशुओं का उचित उपचार कराना चाहिए।

खेजड़ी आधारित कृषि–बागवानी–पशुधन उत्पादन व्यवस्थाएँ विकसित कर आय करें दोगुनी

दिलीप कुमार समादिया
प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

मरूधरा में खेजड़ी (प्रोसोपिस सिनेरेरिया) एक बहुवर्षीय पेड़ एवं बहुउपयोगी स्थानीय प्रजाति है तथा इससे पौष्टिक चारा (लूँग) एवं सब्जी उपयोगी फलियाँ (सांगरी) प्राप्त होती हैं। इस कल्परूपी वृक्ष का योजनाबद्ध विस्तार एवं संरक्षण करके इसके सहचर्य में लाभ ही लाभ प्राप्त किया जा सकता है, क्योंकि यह पौष्टिक खाद्य स्त्रोत के साथ भूमि संरक्षण, पर्यावरण संतुलन, कृषि–योग्य वातावरणीय सुधार तथा नियमित आय के लिए भी महत्वपूर्ण है।

देश के उत्तरी–पश्चिमी शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में मानसून की वर्षा में अनिश्चितता तथा मात्रा व वितरण में असमानताऐं होने से प्रायः खरीफ ऋतु की फसलें असफल हो जाती हैं जिससे इनकी उत्पादकता एवं उत्पादन अस्थिर हो जाने से किसानों की आजीविका पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन क्षेत्रों में वर्षा आधारित खेती से 4–5 वर्षों में एक बार ही भरपूर उपज मिलती है जबकि शेष वर्षों में वर्षा–दिनों में अधिक अंतराल एवं सूखे (drought) की स्थिति के कारण 60–80 प्रतिशत तक फसलों में उत्पादन प्रभावित हो जाता है।

गर्म मरूस्थलीय क्षेत्र की जलवायु अत्यधिक कठोर होने के साथ यहाँ वर्षा भी कम होती है तथा कृषि में प्रायः मिश्रित उत्पादन किया जाता है। परम्परागत कृषि प्रणालियों में बाजरा, ग्वार, मोठ, मूंग, चँवला, तिल, काचरी, काकड़िया, मतीरा, टिण्डा, तुंबा, सेवण, धामण, भरुट आदि के साथ पेड़–पौधों जैसे – खेजड़ी, झरबेर, बोरड़ी, केर, लसोड़ा, कुमट, फोग इत्यादि को बहुउपयोगिता से इन्हें घटक फसलों के रूप में समावेश किया है। इससे जहाँ एक ओर लोगों को भोजन व संतुलित आहार के लिए अनाज, दलहन, फल व सब्जियाँ स्थानीय फसलों से प्राप्त होती हैं वहीं दूसरी ओर इन पेड़–पौधों एवं फसलों से प्राप्त चारा पशुधन (गाय, भेड़, बकरी, ऊँट इत्यादि) के लिए अति आवश्यक है क्योंकि पशुधन आधारित व्यवस्था यहाँ के किसानों की आजीविका का मुख्य साधन है।

मरूधरा में खेजड़ी (प्रोसोपिस सिनेरेरिया) एक बहुवर्षीय पेड़ एवं बहुउपयोगी स्थानीय प्रजाति है तथा इससे पौष्टिक चारा (लूँग) एवं सब्जी उपयोगी फलियाँ (सांगरी) प्राप्त होती हैं। इस कल्परूपी वृक्ष का योजनाबद्ध विस्तार एवं संरक्षण करके इसके सहचर्य में लाभ ही लाभ प्राप्त किया जा सकता है, क्योंकि यह पौष्टिक खाद्य स्त्रोत के साथ भूमि संरक्षण, पर्यावरण संतुलन, कृषि–योग्य वातावरणीय सुधार तथा नियमित आय के लिए भी महत्वपूर्ण है। यहाँ की प्रतिकूल जलवायु एवं सीमित संसाधनों में खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास एवं नवोन्वेषित प्रबन्धन तकनीकी अपनाकर कृषि, बागवानी व पशुपालन से इस क्षेत्र में अकाल की स्थिर कु–छाया को सुकाल में परिवर्तित किया जा सकता है।

विगत 22 वर्षों (1994–2016) से क्षेत्रीय जलवायु को आधार बनाकर किए गये अनुसंधान अध्ययनों में बागवानी फसलों की व्यावसायिक उत्पादन क्षमता की संभावनाओं एवं रूकावटों तथा संसाधनों का समुचित उपयोग जैसे महत्वपूर्ण घटकों का मेरे द्वारा विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गये हैं। कम वर्षा, लम्बी समयावधि एवं अधिक तापमान वाला ग्रीष्मकाल तथा सर्दियों में अत्यधिक न्यूनतम तापमान एवं पाले जैसी वातावरणीय रूकावटों में भी सुनियोजित फसलों का चुनाव तथा उनकी समयावधि को

क्षेत्रीय जलवायु के अनुरूप उत्पादन प्रणालियों में समावेश कर व्यावसायिकता की प्रबल संभावनाएँ आँकी गई हैं। फसलों को वातावरणीय प्रकोप के प्रभाव से बचाने एवं निश्चित उत्पादन के लिए प्रक्षेत्र में उचित कृषि–वातावरण तैयार करना एक सैद्धांतिक आवश्यकता मानी है। इस क्षेत्र में फसल सुरक्षा एवं प्रबंधन की विशेष आवश्यकता है जो प्रभावशाली, स्थिर एवं वैज्ञानिकता से परिपूर्ण हो, जिससे किसान उन्हें सहजता से अपना सके। इसी के साथ फसलों में अच्छी वानस्पतिक वृद्धि एवं गुणवत्तायुक्त उत्पादन के लिए उन्नत व नवोन्वेषित तकनीकों को प्रक्षेत्र प्रबन्धन व्यवस्थाओं में अपनाना होता है। मेरे द्वारा किये गये अनुसंधान कार्यों के आधार पर एक सुनियोजित योजना का सृजन किया गया है जिसको बागवानी आधारित फसल उत्पादन प्रक्षेत्र प्रबन्धन (Horticulture based crop production site management approach, HBCPSMA-Samadia, 2004) नाम दिया है।

खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास तकनीकी

शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में किसान वर्षा आधारित (बारानी) अथवा सीमित सिंचाई द्वारा परम्परागत फसलों से आवश्यक उत्पादन एवं लाभ नहीं ले पा रहे हैं जिसका प्रमुख कारण खेती में उन्नत व नवोन्वेषित तकनीकों का समावेश नहीं करना तथा इनकी उन्नत किस्मों एवं बीजों का अभाव होना प्रमुख है। परंतु अब किसान संस्थान द्वारा विकसित प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीकी में खेजड़ी आधारित व्यवस्थाओं में परम्परागत अथवा गैर–परम्परागत फसलों का समावेश कर कम वर्षा, सीमित सिंचाई व संसाधन तथा विषम परिस्थितियों में भी योजनाबद्ध खेती कर सुनिश्चित उत्पादन ले सकते हैं।

इस योजना में खेजड़ी आधारित कृषि व्यवस्थायें विकसित की जाती हैं तथा किसान, जिनके पास 4–16 या 25 बीघा जमीन का एकल जोत है वे संसाधनों के अनुरूप परम्परागत अथवा गैर–परम्परागत फसलों का समावेश उत्पादन प्रणालियों में कर सकते हैं तथा उनको प्रारम्भ के 2–3 वर्षों तक कड़ी मेहनत करनी होती है जिसका प्रतिफल सुनिश्चित एवं निरन्तर लाभ है। सर्वप्रथम चयनित भू–भाग की बाड़ या तार बंदी करनी होती है जो कि इसका पहला सैद्धांतिक आधार है एवं इससे ही षि–वातावरण तैयार करने वाले बीजू पेड़–पौधों को योजनाबद्ध प्रक्षेत्र के किनारों की चारों दिशाओं में एकल अथवा जोड़े (4x4 मीटर) में खेजड़ी व केर या रोहिड़ा (पूर्व), खेजड़ी व केर या लसोड़ा या रोहिड़ा (पश्चिम), खेजड़ी व कुमट या रोहिड़ा या बोरड़ी (उत्तर) तथा खेजड़ी व लसोड़ा या रोहिड़ा या कुमट (दक्षिण) विकसित करते हैं।

प्रक्षेत्र में उत्पादन व्यवस्थाएँ विकसित करने के लिए उचित आकार के इकाई खेतों का चुनाव तथा संसाधनों के अनुरूप फसलों का चयन किया जाता है। खेजड़ी की किस्म थार शोभा को उत्पादन प्रारूपों (cropping models) में लगाया जाता है तथा ये आधार वृक्ष अनुकूल कृषि–वातावरण तैयार करेगे। प्रक्षेत्र विकास पर सतत् अध्ययनों से यहाँ की जलवायु के अनुरूप फसल उत्पादन के लिए तीन संयोजनों वाली व्यवस्थायें (कृषि–बागवानी–पशुधन) व्यावसायिक खेती के लिए उपयुक्त हैं तथा खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास एवं फसल उत्पादन प्रबंधन मुख्यतः वर्णित बिन्दुओं पर केन्द्रित रहेगा :–

किसान, जिनके पास 4–16 या 25 बीघा मरूस्थलीय जमीन का एकल जोत है। वह खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास अपनाकर फसल उत्पादन व्यवस्थाएँ विकसित कर सकते हैं। सर्वप्रथम इसमें चयनित भू–भाग की बाड़ या तार बंदी की जाती है चूंकि यह इस योजना का पहला सैद्धांतिक आधार है। प्रक्षेत्र बंदी से ही खेत में फसल उत्पादन के लिए उचित कृषि–वातावरण तैयार करने वाले पेड़–पौधों को योजनाबद्ध प्रारूपों में लगाया जाता है। वर्षा ऋतु प्रारम्भ होने के 2–3 महीने पहले प्रक्षेत्र की चारों दिशाओं में तार/बाड़ बंदी के अन्दर व बाहर की ओर एक मीटर चौड़ी व इतनी ही गहरी खाई बनाई जाती है।

वर्षा प्रारम्भ होते ही जुलाई के महीने में प्रक्षेत्र बंदी के अन्दर वाली खाई में निश्चित स्थलों पर स्थानीय प्रजातियों जैसे खेजड़ी, रोहिड़ा, लसोड़ा, कुमट, बोरड़ी, झरबेर, कैर, इत्यादि के बीजू पौधे लगावें अथवा इनके बीजों की बुवाई गड्डों में प्रारूप के अनुसार करें। जिन स्थानों पर

पौधे मर जाते हैं वहाँ पुनः या बारम्बार पौधरोपण वर्षा ऋतु में ही कर लेवें जिससे प्रक्षेत्र विकास के पहले वर्ष में ही ये बीजू पौधे अच्छी तरह से स्थापित होकर बढ़वार लेने लगेंगे। इन पौधों की लगातार देखभाल करें एवं समय–समय पर कटाई–छंगाई कार्य कर उनको उचित एवं आवश्यक आकार देवें। इसी तरह प्रक्षेत्र के इकाई खेतों की मेड़ बंदी पर भी स्थानीय पेड़–पौधों व झाड़ियों की एकल या दोहरी पट्टिकायें (field dividers / windbreak stripes) विकसित करें जिससे यह फसल सुरक्षा के लिए आवश्यक वायुरोधी पट्टिकाओं का कार्य करेंगी, साथ ही प्रक्षेत्र में पहले से स्थित पेड़–पौधों की भी आवश्यक कटाई–छँगाई कर उन्हें व्यवस्थित आकार में रखें।

खेजड़ी आधारित उत्पादन व्यवस्थाओं के लिए चयनित प्रक्षेत्र में उचित आकार के इकाई खेतों का चुनाव करें जिससे क्षेत्रीय जलवायु व संसाधनों के अनुरूप फसलों, किस्मों एवं उत्पादन प्रणालियाँ विकसित की जा सकें। खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास के लिए चयनित खेतों में सर्वप्रथम इसकी किस्म थार शोभा को उत्पादन प्रारूपों में लगाया जाता है जिससे यह आधार वृक्षों के रूप में विकसित होगें तथा यह कृषि के लिए उचित वातावरण तैयार करने में सहयोग देंगे।

प्रक्षेत्र में खेजड़ी को चयनित उत्पादन प्रारूप एवं पौधों को व्यवस्थित पंक्तियों में लगाना होता है जिससे विकसित खेत का स्वरूप बगीचेनुमा बन सके। खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास दो पद्धतियों से विकसित की जाती है जिसमें पहली सघन व एकल बागवानी (सांगरी उत्पादन) तथा दूसरी पद्धति जिसमें अधिकतम दूरी पर कतारों व जोड़ों में खेजड़ी की पट्टिकाऐं विकसित की जाती हैं एवं पट्टिकाओं के मध्य की भूमि को खेत स्वरूप तैयार कर विविध फसल उत्पादन के उपयोग में लिया जाता है।

खेजड़ी की सघन व एकल बागवानी (एक हैक्टेयर का इकाई खेत KM-1, 4x4 या KM-3, 8x8 मीटर) के लिए 4x4 या 8x8 मीटर की दूरी की विधि से पौधे लगाकर बगीचों का विकास एवं फसल उत्पादन किया जाता है। इस तरह विकसित बगीचों में प्रारम्भ के 6–10 वर्षों तक अन्तराशस्य (inter-cropping) फसलों का नियमित उत्पादन किया जाता है जिसमें वर्षा व शीतकालीन फसलें सर्वाधिक उपयुक्त है। एकल बागवानी में प्रक्षेत्र को मार्च से जून तक पूर्णतया खाली रखने पर खेजड़ी वृक्षों में आवश्यक एवं उन्नत कृषि क्रियाऐं सहजता से की जा सकती हैं जिससे गुणवत्तायुक्त साँगरी व लूँग उत्पादन किया जाता है।

दूसरी पद्धति से खेजड़ी आधारित फसल उत्पादन प्रणालियों (khejri based cropping models) के लिए प्रक्षेत्र में एक निश्चित परन्तु अधिक अंतराल की दूरी पर एकल अथवा जोड़े में इसकी पट्टिकाऐं (1–4 हैक्टेयर इकाई खेत KM-9 or KM-11, 24 या 48 मीटर के अंतराल) विकसित करनी होती है एवं पंक्तियों में पौधे 4 मीटर अथवा 4x4 मीटर की दूरी पर लगाये जाते हैं। पट्टिकाओं के मध्य की 24 या 48 मीटर चौड़ाई वाली भूमि को खेत स्वरूप तैयार किया जाता है तथा उत्पादन प्रणालियों के लिए विविध फसलों (एकल फल वृक्ष, सब्जी, बीजीय मसाला, नकदी, अनाज, दलहन, तिलहन, घासों इत्यादि) का चयन वर्षा की मात्रा, सिंचाई जल की उपलब्धता एवं बाजार मांग के अनुरूप किया जाता है।

खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र विकास करने के लिए वर्षा आगमन के साथ ही खेत में उपरोक्त पद्धति में से चयनित प्रणाली के लिए रेखांकन से निश्चित दूरी पर गड्डे अथवा नालियाँ बनायी जाती हैं तथा जुलाई के महीने में 60x60x60 सेन्टीमीटर आकार के गड्ढे तैयार कर लेवें एवं वर्षा के दिनों में इनमें खेजड़ी के बीजों की बुवाई करें अथवा नर्सरी में विकसित 6–9 महीने के बीजू पौधे लगावें, साथ ही नष्ट हुए पौधों के स्थान पर बारम्बार नये पौधे स्थापित करें। स्वस्थानिक बगीचों के लिए जब ये बीजू पौधे 12–18 महीनों की आयु के होने लगें एवं अच्छी वानस्पतिक वृद्धि ले लेते हैं तब उन पर उन्नत किस्म से कलिकायन कर पेबन्दी बना दिया जाता है। इसी तरह नर्सरी में तैयार इसकी

किस्म थार शोभा के पौधों को भी खेत में बगीचा विकसित करने के लिए लगाया जा सकता है।

प्रक्षेत्र में स्थापित इन पेबन्दी पौधों की प्रारंभिक अवस्था से ही व्यवस्थित देखभाल करें तथा कलिकायन भाग से नीचे के मुख्य तने से निकलने वाली जंगली शाखाओं को समय–समय पर काटते रहें। बगीचे में जहाँ–कहीं पौधे मर गए हों वहाँ समय पर नए पौधे लगाकर उनमें भी कलिकायन करें। पेबंदी पौधों में प्रारम्भ के 4–5 वर्षों तक व्यवस्थित कटाई–छँगाई की आवश्यकता होती है जिससे इन्हें पेड़नुमा आकृति दी जा सके। बागवानी के लिए इन नवोन्वेषित तकनीकों को अपनाकर खेजड़ी के विकसित बगीचे 4–5 वर्ष की आयु से ही फलन योग्य एवं स्थाई आय के साधन बन जाते हैं। साथ ही यह आधार वृक्ष प्रक्षेत्र में उचित कृषि–वातावरण तैयार करने में सहायक सिद्ध होंगे जिससे इनकी पट्टिकाओं के मध्य की अंतरा फसलों को अनुकूल लाभ प्राप्त होगा।

खेजड़ी से प्रतिवर्ष साँगरी एवं लूंग उत्पादन के लिए इन पेड़ों की वार्षिक कटाई–छँगाई का कार्य जून महीने के प्रथम पखवाड़े में करें जिस समय इनसे पकी फलियाँ (खोखे) गिरना प्रारंभ होती हैं तथा इस तकनीकी से पेड़ों में अच्छी वानस्पतिक वृद्धि, वार्षिक सांगरी व लूंग एवं अधिक उत्पादन प्राप्त होता है।

प्रक्षेत्र विकास एवं प्रबंधन की नवोन्वेषित तकनीकियों में क्रमबद्ध फसल उत्पादन व्यवस्थाएँ जैसे वर्षा जल संग्रहण व नमी संरक्षण क्रियाओं को अपनाना जिसमें मानसून आगमन की सूचना के साथ ही जून महीने में खेजड़ी बगीचों एवं इनकी पट्टिकाओं के मध्य की भूमि को तैयार कर एक गहरी जुताई कार्य प्रमुख है। जून महीने के दूसरे पखवाड़े में गोबर या भेड़–बकरी की मींगनी खाद मिलाकर एक बार पुनः गहरी जुताई करें, तत्पश्चात् पाटा लगाकर खेत को वर्षाकालीन फसलों की बुवाई के लिए तैयार रखें। संस्थान में किये गये अनुसंधान अध्ययनों के निष्कर्षों से यह पाया गया कि जून महीने के दूसरे पखवाड़े में जुताई तथा फसल बुवाई के लिए तैयारियों से खेत में वर्षा जल अधिक संग्रहित व संरक्षित रहता है एवं खरपतवार भी कम पनपते हैं। इसी प्रकार फसलों की कटाई पश्चात् नवम्बर–दिसम्बर के महीने में जुताई कार्य से इनके अवशेष व खरपतवार भूमि में मिल जाते हैं तथा सर्दियों में होने वाली वर्षा (मावठ) का जल भी खेत में अधिक संचित होता है।

खेजड़ी प्रक्षेत्र में वर्षा आधारित व चयनित फसलों की खेती के लिए जून के अंतिम सप्ताह से लेकर जुलाई महीने के अंत तक जब भी अच्छी वर्षा का दौर हो, उसी समय बुवाई कार्य करें। सिंचाई की व्यवस्था होने पर उपयुक्त विधि (बूँद–बूँद, फव्वारा या नाली विधि) अपनाकर वर्षा एवं शीतकालीन (सब्जी, बीजीय मसाला, दलहन एवं अनाज) फसलों का चुनाव करें। फल–वृक्षों एवं यांत्रिकीकरण बागवानी के लिए खेजड़ी की अधिकतम दूरी वाली उत्पादन प्रणालियाँ सर्वाधिक उपयुक्त हैं।

क्षेत्रीय जलवायु के अनुरूप प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीकी के अंतर्गत फसल उत्पादन के लिए उन्नत किस्मों का चयन एवं समय पर विधिवत बुवाई, पौध संख्या निर्धारण, निराई–गुड़ाई व अन्तर–शस्य क्रियाएँ, नमी संरक्षण के लिए पलवार का उपयोग तथा सिंचाई जैसे महत्वपूर्ण घटकों को समेकित एवं वैज्ञानिकता से अपनाना आवश्यक है। इसी प्रकार फसल में अच्छी वानस्पतिक वृद्धि एवं उपज के लिए संतुलित खाद, उर्वरक एवं नियामक तत्वों का उपयोग तथा सुरक्षा के लिए कीट–व्याधियों व पशु–पक्षियों से बचाव के लिए समेकित निगरानी एवं उपाय भी प्रक्षेत्र प्रबंधन के मुख्य अवयव हैं। इसी तरह फसलों में फल–फलियों व अन्य उत्पादों की समय पर तुड़ाई/कटाई, बाजार के अनुरूप तैयारियाँ व विपणन तथा खेत में ही उत्पाद प्रसंस्करण जैसे आर्थिक पक्ष की तकनीकियों को अपनाकर खेती में भी अधिक लाभ लिया जा सकता है।

इन क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता में स्थिरता के लिए खेजड़ी आधारित प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीकी अपनाकर खेत की सूक्ष्म जलवायु को फसलों के लिए अनुकूल एवं सुरक्षित बनाना अति आवश्यक है तथा चयनित फसलों में वर्षा अथवा सीमित सिंचाई जल प्रबंधन से सुनिश्चित उत्पादन के लिए

मानसून सूचना तंत्र का उपयोग, सिंचाई के उपयुक्त तरीकों (बूँद–बूँद, फव्वारा या नाली विधि) का चुनाव एवं जीवनदायी सिंचाई जैसे वैज्ञानिक तथ्यों का समावेश प्रभावशाली होता है।

राजस्थान के शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्र जहाँ प्रायः वर्षा कम (250–350 मिलीमीटर) परन्तु एक नियमित अन्तराल पर होती है, उन क्षेत्रों में खेजड़ी आधारित उत्पादन प्रणालियों में परम्परागत फसलों (ग्वार, मोठ, बाजरा, तिल, काचरी, फूटककड़ी, मतीरा, टिण्डा, तूम्बा), फल (झरबेर, बोरड़ी, लसोड़ा, कैर, कूमट), पेड़ व झाड़ियाँ (रोहिड़ा, फोग, खींप) एवं घासों (सेवण, धामण, भरूट) की प्रक्षेत्र प्रबंधन तकनीकी से व्यवस्थित खेती कर कम संसाधनों में भी अधिकतम आय ली जा सकती है। मरूस्थलीय जलवायु में खेजड़ी आधारित प्रणाली (KM-9, 24x4x4 मीटर) जिसमें कृषि, बागवानी एवं पशुधन व्यवस्था में झरबेर (4x4 मीटर) के साथ सेवण घास या ग्वार या काचरी से सर्वाधिक उत्पादन (बायोमास) एवं आय अर्जित की जा सकती है।

सारणी–1: खेजड़ी आधारित कृषि–बागवानी–पशुधन व्यवस्थाओं के लिए सर्वाधिक उपयुक्त अवयव एवं प्रजातियाँ।

कृषि अवयव	शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में वर्षा आधारित फसल उत्पादन	जीवनदायी (1–2) अथवा सीमित (3–4) सिंचाई जल प्रबंधन से फसल उत्पादन (फव्वारा/बूँद–बूँद/नाली विधि)
(1) अनाज फसलें	बाजरा	बाजरा (क्षेत्रीय किस्में)
(2) दलहन फसलें	ग्वार (आरजीसी–936), मोठ (आरएमओ–40)	मूंग, चँवला, चना
(3) तिलहन फसलें	तिल, तुंबा	तिल, तारामीरा, सरसों
(4) मसाला फसलें	सॉंझी	मेंथी, जीरा
(5) सब्जी फसलें	काचरी (एएचके–119), फूटककड़ी (एएचएस–10), मतीरा (एएचडब्ल्यू–19) ग्वारफली (थार भादवी)	मतीरा (थार माणक, एएचडब्ल्यू–19), टिंडा (एएचआरएम–1), कुन्दरू (एएचआईजी–1) ककड़ी (एएचसी–2, एएचसी–13), सेमफली (थार कार्तिकी, थार माघी), कोम्बाफली (थार माही) चँवलाफली (सीआईएएच–1) बैंगन (थार रचित)
(6) फल वृक्ष	झरबेर (सीआईएएच सलेक्शन–1&2), कैर (सीआईएएच थोर्नलेस–1), लसोड़ा (सीआईएएच सलेक्शन–1) बोरड़ी, पीलु, गूँदी	बेर (थार भूभराज, गोला), आँवला (एनए–7, गोमा ऐश्वर्य),
(7) अल्प–प्रचलित फसलें	फोग, खींप,	सहजन (एएचएमओ–1), मीठानीम, ग्वारपाठा (सीआईएएच सलेक्शन–1),
(8) औषधीय एवं सुगन्धित	सोनामुखी, तुंबा	ईसबगोल, अश्वगंधा, मेंहदी
(9) बहुउपयोगी/वानिकी	खेजड़ी (थार शोभा), कुमट, रोहिड़ा,	नीम, शीशम
(10) घास फसलें	सेवण, धामण, भरूट	–
(11) पशुधन		
	गाय (राठी, नागौरी, थारपारकर, कांकरेज, गिर)	
	बकरी (मारवाड़ी, कच्छी, परबतसरी)	
	भेड़ (मारवाड़ी, जैसलमेरी, चोकला, नाली, मगरा, पूगल, सोनाडी)	
	ऊँट (बीकानेरी, जैसलमेरी)	

सारणी–2: शुष्क क्षेत्र में कृषि–बागवानी–पशुधन के लिए खेजड़ी आधारित सर्वाधिक उपयुक्त प्रणाली (केएम–9, 24x4x4 मीटर, तीन अच्छे मानसून वर्षों, 2012–2015) का आंकलन।

उत्पादन प्रणाली	फसल	चार हैक्टेयर प्रक्षेत्र के अनुरूप पौधों की संख्या	एक हैक्टेयर प्रक्षेत्र के अनुरूप पौधों की संख्या	उपज प्रति वर्ष	औसत पाँच वर्ष की आयु से उपज / पौधा (किलोग्राम)	औसत पाँच वर्ष की आयु से उपज / हैक्टेयर (क्विंटल)
केएम–9, 24 (4x4) मीटर	खेजड़ी, 4x4 मीटर जोड़े में पौध रोपण	736	168	सांगरी लूँग कुल उत्पाद	5.75 7.36 13.11	9.661 12.364 22.024
	+ आधार वृक्ष खेजड़ी के साथ झरबेर अंतराषस्य					
	झरबेर, 4x4 मीटर सें अंतराषस्य पौध रोपण, 24 मीटर चौड़ाई की पटिटकाओं में	1610	357	फल पाला कुल उत्पाद	1.85 3.64 5.49	6.604 12.994 19.598
	कुमट, 4x4 मीटर उत्तर दिषा	100	50	बीजीय फलियाँ	5.15	2.575
	लसोड़ा (गूँदा), 4x4 मीटर दक्षिण दिषा	100	50	फल	18.25	9.125
	कुल पौध संख्या / इकाई क्षेत्र	2546	625			53.322
	+ खेजड़ी एवं झरबेर के साथ वर्षा आधारित चारा / सब्जी अंतराषस्य उत्पादन (70% क्षेत्र)		ताजा उपज kg/ 16 sq.m क्षेत्र	सूखी उपज kg/ 16 sq.m क्षेत्र	ताजा उपज q / ha क्षेत्र	सूखी उपज q / ha क्षेत्र
	सेवण	अथवा	44.5	22.2	278.12	140.62
	धामण	अथवा	21.5	11.3	134.37	70.62
	भरूट	अथवा	14.8	5.9	92.5	36.87
	ग्वार	अथवा	48.5	13.5	303.12	84.37
	काचरी (एएचके–119)	अथवा	फल		42.48	--
	ग्वारफली (थार भादवी)		फलियाँ		45.25	
अथवा	खेजड़ी के साथ वर्षा आधारित सब्जी फसल उत्पादन (85% क्षेत्र)		तीन वर्षों से उपज स्तर (क्विंटल / हैक्टेयर)			औसत उपज (क्विं. / है.)
	काचरी (एएचके–119)	अथवा	फल	42 – 88		56.58
	ग्वारफली (थार भादवी)		फलियाँ	45 – 85		54.34

कृषि–रसायनों का बढ़ता उपयोग

अश्विनी कुमार रॉय, वरिष्ठ वैज्ञानिक
राष्ट्रीय डेयरी अनुसन्धान संस्थान करनाल (हरियाणा)

आजकल कृषि उत्पादन मुख्यतः खाद, पानी, बीज और कीटनाशकों पर निर्भर होता है। यदि कृषि में उपयुक्त कीटनाशकों का उपयोग न किया जाए तो लगभग 40 प्रतिशत तक कृषि उत्पादन की हानि हो सकती है। भारत में एग्रो–केमिकल अथवा कृषि–रसायनों का बहुत बड़ा बाजार है जो तीव्र गति से बढ़ रहा है तथा इनकी घरेलू माँग लगभग 8 प्रतिशत की सालाना दर से बढ़ रही है। चीन के बाद सबसे अधिक रासायनिक उर्वरक भारत में ही उपयोग लाए जाते हैं।

इस समय संसार की आबादी 7 बिलियन से अधिक है जो 2050 तक 9 बिलियन का आंकड़ा पार कर जाएगी। इससे खाद्य पदार्थों की विश्वव्यापी माँग बढ़ेगी। कृषि उत्पादन बढ़ाने हेतु हमारी सरकार, किसानों एवं कृषि रसायन निर्माता कंपनियों को समन्वित प्रयास करने होंगे तभी बढ़ती हुई भोजन की वैश्विक माँग को पूरा किया जा सकता है। हालाँकि पिछले कुछ वर्षों में संकर बीज एवं कृषि रसायनों के उपयोग से प्रति हेक्टेयर खेती की पैदावार दोगुणी हुई है, फिर भी इस दिशा में और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है। फसलों की रक्षा करने वाले रसायनों के उपयोग से कृषि उत्पादकता को 50 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है। विश्व कृषि उपज का लगभग 25 प्रतिशत भाग तो कटाई के बाद चूहों एवं कीटों द्वारा ही नष्ट कर दिया जाता है। अतः फसल सुरक्षा कृषि–रसायन हमारे लिए आहार सुनिश्चित बनाते हैं, जो खाद्य–सुरक्षा की गारंटी भी देते हैं। आजकल कृषि उत्पादन मुख्यतः खाद, पानी, बीज और कीटनाशकों पर निर्भर होता है। यदि कृषि में उपयुक्त कीटनाशकों का उपयोग न किया जाए तो लगभग 40 प्रतिशत तक कृषि उत्पादन की हानि हो सकती है। भारत में एग्रो–केमिकल अथवा कृषि–रसायनों का बहुत बड़ा बाजार है जो तीव्र गति से बढ़ रहा है तथा इनकी घरेलू माँग लगभग 8 प्रतिशत की सालाना दर से बढ़ रही है। चीन के बाद सबसे अधिक रासायनिक उर्वरक भारत में ही उपयोग लाए जाते हैं। इस वर्ष देश में यूरिया तथा डाइअमोनियम फोस्फेट की माँग क्रमशः 33 व 12 मिलियन टन तक जा सकती है। भारत अपनी आवश्यकता हेतु 80 प्रतिशत यूरिया की आपूर्ति करने में सक्षम है जबकि शेष यूरिया की भरपाई आयात द्वारा होती है। भारत में सालाना 5 मिलियन टन पोटाश की आवश्यकता भी पड़ती है जिसकी आपूर्ति केवल आयात द्वारा ही की जाती है। अधिकतर उर्वरकों का निर्माण सरकारी कंपनियों द्वारा होता है तथा माँग एवं आपूर्ति में अधिक अंतर होने के कारण इनका आयात लगभग हर साल ही करना पड़ता है। आयातित रासायनिक उर्वरक महंगे होने के कारण 50 प्रतिशत तक की सब्सिडी पर बेचे जाते हैं ताकि किसान इन्हें आसानी से खरीद सकें।

एग्रो–केमिकल्स या कृषि रसायन क्या हैं ?

एग्रो–केमिकल्स ऐसे उत्पादों की श्रेणी है जिसमें सभी कीटनाशक रसायन एवं रासायनिक उर्वरक शामिल होते हैं। यद्यपि ये सभी रसायन किसानों के लिए अत्यंत महंगे हैं फिर भी बेहतर उत्पादन हेतु इनका उपयोग दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है यदि इनका उपयोग सही मात्रा एवं उपयुक्त विधि द्वारा किया जाए तो ये किसानों के लिए बेहतर आय के अवसर प्रदान कर सकते हैं।

रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का उपयोग मिट्टी की प्रकृति और स्थानीय वातावरण पर निर्भर करता है। रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से पहले मिट्टी की जांच करवानी चाहिए ताकि केवल 'कमी' वाले तत्त्वों का पता लगा कर उनकी भरपाई की जा सके। उदाहरण के लिए यदि मिट्टी में नाइट्रोजन की कमी है तो इसकी पूर्ति यूरिया द्वारा की जा सकती है ताकि निर्धारित लक्ष्य के अनुसार फसल की उच्चतम उत्पादकता प्राप्त की जा सके। आमतौर पर उपयोग में लाए जाने वाले एग्रो–रसायनों में डाइअमोनियम फोस्फेट, यूरिया, जिंक सल्फेट, एन.पी.के., पोटाशियम सल्फेट, बोरेक्स, फेरस सल्फेट तथा मेगनीज सल्फेट आदि शामिल हैं। कृषि उपज बढ़ाने में रासायनिक कीटनाशकों की भूमिका से इंकार नहीं किया जा सकता क्योंकि इनके उपयोग से उत्पादन बढ़ता है तथा विदेशी जिंसों के आयात में बचत भी होती है।

कीटनाशकों का उपयोग

भारतवर्ष में लगभग 600 ग्राम कीटनाशक प्रति हैक्टेयर की ही खपत होती है जबकि विकसित देशों जैसे जापान तथा चीन में यह 12 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर से भी अधिक है। भारत में कीटनाशकों की खपत कम होने का सबसे बड़ा कारण है। छोटे किसान, जिनके पास बहुत कम कृषि योग्य भूमि है। इनकी क्रय शक्ति इतनी नहीं होती कि ये अपने खेतों में उन्नत बीज एवं कृषि रसायनों का प्रयोग कर सकें। कीटनाशकों की सर्वाधिक खपत उत्तरप्रदेश, पंजाब, महाराष्ट्र एवं हरियाणा में होती है। हमारे देश में पंजाब एक ऐसा राज्य है जहाँ किसान हर दिन नए कीटनाशक एवं बीजों की खेती करने में अत्यधिक दिलचस्पी लेते हैं क्योंकि उन्नत कृषि एवं अधिक उत्पादन हेतु इन्हीं का महत्त्व सर्वाधिक आंका गया है।

कीटनाशकों की श्रेणी में वे सभी कृत्रिम रसायन, उपकरण अथवा जीवाणु आते हैं जिन्हें रोग फैलाने वाले कीड़ों एवं परजीवियों को मारने, भगाने अथवा नियंत्रित करने हेतु उपयोग में लाया जाता है। कीटनाशक अपने संगठन के अनुसार कार्बनिक एवं अकार्बनिक प्रति के हो सकते हैं। कार्बनिक कीटनाशकों में ओर्गेनो–फोस्फेट, कार्बामेट, थायोसाइनेट, ओर्गेनो–क्लोरीन तथा एंटीबायोटिक आदि सम्मिलित हैं। कीटनाशकों का प्रभाव उनके उपयोग करने की विधि पर निर्भर करता है क्योंकि विभिन्न कीटनाशकों की अवशोषण क्षमता भी अलग–अलग होती है। यह मिटटी के गुणों जैसे इसमें कार्बनिक पदार्थों की मात्रा आदि पर भी निर्भर करता है। कुछ कीटनाशक पावडर के रूप में होते हैं जिन्हें सीधे ही मिट्टी में मिला दिया जाता है। कुछ कीटनाशक स्प्रे किए जाते हैं जो स्थानीय वातावरण एवं सिंचाई व्यवस्था पर निर्भर करता है। डाइथेन एम–45 व जेड–78, फाईटोलान या ब्लिटोक्स–50 कुछ ऐसे स्प्रे हैं जिन्हें फफूंद–नाशक के रूप में उपयोग किया जाता है. कई बार विभिन्न संक्रमणों से बचाव हेतु बीजों को भी रसायनों द्वारा उपचारित किया जाता है ताकि उगने वाले पौधों को रोगों से बचाया जा सके। डाइनिकोलाजोल, प्रोपिकोनाजोल, टेबुकोनाजोल आदि कुछ ऐसे ही रसायन हैं जिन्हें 2 ग्राम या 2 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज हेतु उपयोग में लाया जाता है ताकि ये पूर्णतया रोग–मुक्त रहें। देश में हर साल अत्याधुनिक कीटनाशकों का उपयोग बढ़ता जा रहा है। इनका उपयोग पहाड़ी क्षेत्रों में कम परन्तु मैदानी क्षेत्रों में सर्वाधिक होता है। ज्ञात रहे कि मैदानी क्षेत्रों में कीटों का प्रकोप भी अधिक ही होता है क्योंकि यहाँ कि जलवायु इनके जीवित रहने हेतु अनुकूल होती है।

उपयोग के आधार पर एग्रो–रसायन कीटनाशक, फफूंद–नाशक अथवा रोग–नाशक भी हो सकते हैं। कृषि रसायनों को निश्चित मात्रा में पानी में मिला कर बीजों, मिट्टी, सींचित जल एवं फसलों पर डाला जाता है ताकि कीटों, खरपतवार, फफूंद एवं बीमारियों से बचाव हो सके। फसल सुरक्षा रसायन ऐसे कीटनाशक होते हैं जो फसलों पर पनपने वाले कीटों को नष्ट कर देते हैं। फफूंदनाशक एग्रो–केमिकल या तो फफूंद को पनपने से रोकते हैं या इसे पूरी तरह से नष्ट करने में सक्षम होते हैं। बायो–कीटनाशक ऐसे उत्पाद हैं जिन्हें पौधों, जंतुओं, जीवाणुओं तथा कुछ खनिजों द्वारा तैयार किया जाता है। ये बहुत कम मात्रा में प्रभावशाली होते हैं तथा हमारे पर्यावरण को कोई हानि नहीं पहुंचाते। कुछ ऐसे एग्रो–रसायन भी होते हैं जो भण्डारण के

दौरान हमारी फसलों को चूहों आदि से बचाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ रसायन ऐसे भी होते हैं जो पौधों में वृद्धि दर बढ़ाते हैं। दूसरी हरित क्रांति लाने के लिए हमें समन्वित कीटनाशक प्रबंधन योजना पर कार्य करना होगा जिसमें कीटों के नियंत्रण हेतु यांत्रिक, भौतिक, रासायनिक एवं जैविक उपायों को एक–साथ अपनाना होगा ताकि कृषि उत्पादन में अधिकाधिक वृद्धि हो सके।

कीटनाशकों के दुष्प्रभाव

कई कीटनाशक मिट्टी में मिल कर नष्ट नहीं होते तथा बरसात होने पर भूमि के नीचे चले जाते हैं। इन्हें पौधों की जड़ों द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है, जिससे ये भोजन के द्वारा मनुष्यों के शरीर में प्रवेश कर सकते हैं।

कीट–रसायन द्वारा प्रदूषित पौधों से पशुओं और मनुष्यों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कीटनाशकों द्वारा कुछ ऐसे जीव भी नष्ट हो जाते हैं जो हमारी फसलों एवं मिट्टी के लिए लाभदायक होते हैं। कई बार इनके अत्यधिक उपयोग से हमारी बहुमूल्य जैव–विविधता के नष्ट होने का खतरा भी बना रहता है। अतः यथासंभव इनका उपयोग आवश्यकतानुसार सोच–समझ कर ही करना चाहिए ताकि पर्यावरण एवं जीवों को इनके हानिकारक प्रभाव से बचाया जा सके। भारत में सर्वप्रथम उपयोग में लाया जाने वाला कीटनाशक डी.डी.टी. था, जो आज हमारी मिट्टी एवं जल को सर्वाधिक प्रदूषित कर रहा है। भारतीय किसान कीटनाशकों के उपयोग के प्रति अभी अधिक सजग नहीं हैं। इस विषय में पर्याप्त ज्ञान का अभाव, इनका स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर पड़ने वाला दुष्प्रभाव तथा उपयोग में लाते समय आवश्यक सावधानियों का अनुपालन न करने के कारण ये अधिक लोकप्रिय नहीं हैं। कीटनाशकों के उपयुक्त रख–रखाव, प्रबंधन एवं नियंत्रण को एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण विषय समझ कर अध्ययन करना चाहिए, अन्यथा इनसे होने वाले लाभों की तुलना में हानियाँ कहीं अधिक हो सकती हैं।

कीटनाशकों से बचाव जरूरी है

कीटनाशकों का भंडारण एवं विपणन उपयुक्त एजेंसियों के माध्यम से ही होना चाहिए। यदि इनका उपयोग ठीक से न किया जाए तो ये अन्य वनस्पतियों, वन्य–प्राणियों तथा भूमिगत जल–स्रोतों को भी प्रभावित कर सकते हैं। किसानों को इस विषय में शिक्षित करके इनके दुरुपयोग से बचा जा सकता हैं। कई किसान एक दूसरे की देखा–देखी भी इन रसायनों का उपयोग करने लगते हैं जो उचित नहीं है। इनका उपयोग किसी कृषि–विशेषज्ञ की सलाह पर ही करना चाहिए। बचे हुए कृषि–रसायनों को उपयोग के बाद बच्चों की पहुँच से दूर संभाल कर रखें। कृषि हेतु उपयोग में लाए गए कीट–नाशकों को अपने घरों में उपयोग न करें क्योंकि ये अत्यधिक जहरीले हो सकते हैं। कुछ किसान अपने बचे हुए कृषि–रसायनों को मिट्टी में दबा देते हैं या पानी में डाल देते हैं जिससे प्रदूषण तो फैलता ही है तथा अन्य जीवों की जान को भी खतरा रहता है। अतः किसानों को बचे हुए रसायन संभाल कर रखने चाहिए ताकि इन्हें अगली फसल पर उपयोग में लाया जा सके। रसायनों के छिडकाव अथवा

उपयोग हेतु विशेष प्रकार के कृषि–यंत्र मिलते हैं जिनसे इस्तेमाल के दौरान न्यूनतम प्रदूषण फैलता है। छिड़काव से पहले किसानों को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि हवा का रुख कैसा है तथा आस–पास अन्य पशु एवं बच्चे तो नहीं हैं ? छिड़काव हेतु सांयकाल का समय अधिक उपयुक्त होता है क्योंकि इस समय तक पत्तियों पर पड़ी ओस की बूँदें सूख चुकी होती हैं। कुछ फसलें एग्रो–रसायनों के प्रति अत्यंत संवेदनशील होती हैं, जिन्हें इनसे दूर ही रखना चाहिए। रसायनों के उपयोग से पहले उत्पाद पर लिखी सभी सावधानियों को ध्यान से पढ़ना चाहिए। तेज हवा चलने के समय पर कीट–नाशकों का उपयोग नहीं करना चाहिए। आजकल स्प्रे–यंत्रों में बूंदों का आकार छोटा या बड़ा रखने एवं वायु दाब बढ़ाने या घटाने की सुविधा होती है जिसे आवश्यकतानुसार उपयोग में लाना चाहिए।

कीटनाशकों के संभावित दुरुपयोग की पहचान करना भी आसान है। इनका आवश्यकता से अधिक उपयोग होने पर पत्तियाँ मुरझा जाती हैं तथा पौधे मर भी सकते हैं। किसी भी दुरुपयोग की आशंका को रोकने के लिए प्रभावित स्थान की मिट्टी एवं जल के नमूनों की जांच करवानी चाहिए ताकि प्रदूषण फैलने से रोका जा सके। कीटनाशक खरीदने से पहले उस पर लगे लेबल एवं सील की जांच कर लेनी चाहिए ताकि इसके निर्माता, निर्माण तिथि, विधि एवं इसकी उपयोगिता सम्बन्धी सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त हो सके। जो विक्रेता नकली कीटनाशक बेचते हैं या बिना पैकिंग के देते हैं, उनसे सावधान रहना चाहिए। एक अनुमान के अनुसार आजकल बाजार में मिलने वाले 40 प्रतिशत कीटनाशक नकली हो सकते हैं। ये उत्पाद न केवल कीटों को मारने में असमर्थ होते हैं, बल्कि मिट्टी एवं पर्यावरण को भी हानि पहुँचा सकते हैं। कीट–नाशक उपयोग करने के बाद इनकी प्लास्टिक की बोतलों को फैंकना नहीं चाहिए। इन्हें पानी में धोकर ही पुनःचक्रित करने हेतु कबाड़ में भेजना चाहिए। कुछ लोग इन्हें घरेलू उपयोग में लाते हैं जो खतरनाक हो सकता है।

अमेरिका, जापान तथा चीन के बाद भारत ही एग्रो–केमिकल्स का चौथा सबसे बड़ा उत्पादक देश है. भारत में तीन तरह की कम्पनियां जैसे बहुराष्ट्रीय, सरकारी क्षेत्र तथा लघु उद्योग मिल कर एग्रो–केमिकल्स का उत्पादन करती हैं।देश के सकल एग्रो–केमिकल्स बाजार का 80 प्रतिशत नियंत्रण केवल 10 कंपनियों के नियंत्रण में है। सभी फसल रक्षक रसायनों के बाजार का 60 प्रतिशत भाग केवल कीटनाशकों की बिक्री से प्राप्त होता है। ये रसायन अधिकतर धान तथा रुई की खेती पर प्रयोग किए जाते हैं। आजकल धान, गेहूँ, फलों तथा सब्जियों की फसलों पर कीट–नाशक के रूप में जड़ी–बूटियों का प्रयोग भी होने लगा है हालाँकि इन जैव–कीटनाशकों का वर्तमान बाजार सकल कीटनाशकों के बाजार का केवल 3 प्रतिशत भाग ही है। इस क्षेत्र में विकास की असीम संभावनाएं हैं क्योंकि ये उत्पाद न केवल प्रभावशाली हैं अपितु फसलों के लिए सुरक्षित भी हैं। पिछले कुछ वर्षों में भारत से निर्यात होने वाले कीटनाशकों में भारी वृद्धि हुई है। वैश्विक स्तर पर भारत कीटनाशकों का तेरहवां सबसे बड़ा निर्यातक है। भारत मुख्यतः ब्राजील, अमेरिका, फ्रांस तथा नीदरलैंड को कीटनाशक निर्यात करता है। भारतीय कीटनाशक सस्ते व प्रभावशाली होने के कारण दुनिया भर में अपनी पहचान बना चुके हैं।

जिस भाषा का व्यवहार भारत के प्रत्येक प्रान्त के लोग करते हैं, जो पढ़े–लिखे तथा अनपढ़ दोनों की साधारण बोल चाल की भाषा है, जिसको प्रत्येक गांव में थोड़े बहुत लोग अवश्य ही समझ लेते हैं, उसी का यथार्थ नाम हिन्दी है।

–एच.टी.केलब्रुक

रामायण से सीखिए मैनेजमेंट के आधुनिक सिद्धांत

गौरव बिस्सा
एसोसिएट प्रोफेसर, प्रबंध अध्ययन विभाग
राजकीय अभियांत्रिकी कॉलेज बीकानेर

महर्षि वाल्मीकि रचित रामायण और गोस्वामी तुलसीदास रचित रामचरितमानस में स्व प्रबंधन, अनुशासन, निष्ठा, श्रद्धा और राष्ट्रप्रेम के उदाहरण अथाह मात्रा में प्राप्त होते हैं। रामायण नैतिकता की परिसीमा है। जिसके नायक श्रीराम के द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य धर्म की अनुपालना में किया गया प्रतीत होता है

जीवन की प्रत्येक गतिविधि के द्वारा हम प्रबंध के मूल तत्व सीख सकते हैं। स्वयं को नियमित और अनुशासित करने हेतु स्व प्रबंधन अर्थात व्यक्ति के जीवन का प्रबंधन प्रमुख माना गया है। स्व प्रबंधन के सिद्धांत श्रीमद्भागवद्गीता, कौटिल्य अर्थशास्त्र, रामायण और महाभारत अदि ग्रंथों में छिपे हैं।

महर्षि वाल्मीकि रचित रामायण और गोस्वामी तुलसीदास रचित रामचरितमानस में स्व प्रबंधन, अनुशासन, निष्ठा, श्रद्धा और राष्ट्रप्रेम के उदाहरण अथाह मात्रा में प्राप्त होते हैं, रामायण नैतिकता की परिसीमा है। जिसके नायक श्रीराम के द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य धर्म की अनुपालना में किया गया प्रतीत होता है।

1. **राष्ट्र और गुरुजनों के प्रति समर्पण–** गुरु को अंधकार से निकल कर प्रकाश प्रदाता मानने वाली रामायण गुरु को सर्वोच्च स्थिति प्रदान करती है। महर्षि विश्वामित्र द्वारा राक्षसों के विनाश हेतु जब राजा दशरथ से राम और लक्ष्मण को माँगा गया तो राजा दशरथ अधिक इच्छुक नहीं थे फिर भी श्रीराम और लक्ष्मण ने राष्ट्र रक्षा को सर्वोपरि मानते हुए गुरु की आज्ञा का पालन किया और राक्षसों को समाप्त करने में महर्षि विश्वामित्र की सहायता की।

युद्ध से पूर्व भगवान राम का कथन –

"अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते,
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"

अर्थात स्वर्णमयी लंका से भी प्रिय जननी जन्मभूमि और उनका प्रेम है। यह बात श्री राम ने लंका युद्ध से पूर्व अयोध्या की पावन माटी की पूजा करते समय कही और कहा कि राष्ट्र की मिट्टी में ही सुखद स्वर्गानुभूति छुपी है।

राष्ट्र प्रेम की शिक्षा मात्र श्रीराम और उनके पक्षकारों से ही नहीं मिलती अपितु लंकापति रावण के पुत्र इन्द्रजीत और अतिकाय के बलिदान से भी मिलती है। मेघनाद इन्द्रजीत जो रावण का परम पराक्रमी पुत्र था, जिसने राम–रावण युद्ध में दो बार लंका को विजय दिलायी, उसकी राष्ट्रभक्ति भी प्रशंसनीय है। लक्ष्मण के साथ अंतिम युद्ध करते समय जब मेघनाद ने पाया कि ब्रह्मास्त्र, पाशुपास्त्र और सुदर्शन चक्र भी लक्ष्मण की प्रदक्षिणा कर लौट आये तो वह अपने पिता को यह समझाने पहुंचा कि वह स्वयं तो आज राष्ट्र के नाम उत्सर्ग हो जायेगा परन्तु रावण अब श्रीराम से संधि कर लें। जब उसने यह बात अपनी पत्नी सुलोचना को कही तो सुलोचना ने उसे राष्ट्र धर्म निभाने को कहा और बताया कि देश से बढ़कर कुछ नहीं। इसी कारण भारतीय संस्कृति में सुलोचना की गिनती विश्व की महान सती स्त्रियों में होती है।

राम रावण युद्ध के दौरान देशभक्ति का पाठ कुम्भकर्ण से भी सीखा जा सकता है। कुम्भकर्ण और विभीषण के बीच हुआ वाद–विवाद हमें अपने अपने धर्म पथ पर टिके रहने की प्रेरणा देता हैं। कुम्भकर्ण द्वारा विभीषण को यह कहा जाना कि भुजा में घाव होने पर उसे काटकर नहीं फेंका जाता और भुजा, भुजा का साथ नहीं छोडती। विभीषण ने देश का साथ छोड़कर गलती की है।

2. **स्वतः दायित्व का विस्तार–** स्वतः दायित्व के विस्तार का अर्थ है कि मात्र कही गयी जिम्मेदारियों को ही नहीं अपितु उससे भी बढ़कर कार्य कर दिखाना प्रबंधकीय है।

भाषा में इसे उत्पादकता वृद्धि (प्रोडेक्टिविटी इनहेंसमेंट) कहते हैं। हनुमान जी को छलांग लगाकर सीता जी के समक्ष सिर्फ यह सन्देश देना था कि श्रीराम शीघ्र ही पहुँचने वाले हैं। तथा उन्हें सीताजी के समाचार श्रीराम तक पहुँचाने थे। परन्तु हनुमानजी ने संदेशवाहक की जिम्मेदारी के अलावा स्वतः अपने दायित्व का विस्तार कर लंका दहन द्वारा रावण को यह सन्देश दिया कि वे अकेले ही समूची लंका का सर्वनाश कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त जब वो पहली बार सीताजी के समक्ष पहुंचे तो कहीं सीता माता उनके वानर रूप को रावण की लीला न समझ लें तो उन्होंने सर्वप्रथम ब्राह्मण वेश धर कर श्रीरामकथा प्रारंभ की। उन्होंने अशोक वाटिका को उजाडकर तथा रावण के पराक्रमी पुत्र अक्षय कुमार का वध करके सीता जी को यह समझाने की कोशिश की कि अब रावण का अंत समय निकट है। अपने दायित्व के प्रति अथाह समर्पण हनुमान जी से सीखा जा सकता है। जब सागर के बीच में हनुमान जी के पिता के मित्र मैनाक पर्वत ने हनुमान जी को विश्राम करने को कहा तो उन्होंने उत्तर दिया– "राम काज कीन्हे बिनु, मोहे कहाँ विश्राम" अर्थात राम का काज सर्वोपरि है, और इसमें विश्राम के लिए स्थान नहीं। हनुमान जी की श्रद्धा भी वन्दनीय है। जब सीतामाता का समाचार लेकर हनुमान जी पुनः किष्किन्धा पहुंचे तब श्रीराम ने उनका धन्यवाद ज्ञापित किया परन्तु हनुमान जी ने कहा कि "आप की कृपा और आशीर्वाद जिसके पास है, वह सभी कार्य कर सकता है। यह मेरा नहीं आप ही की कृपा का फल है।"

3. समानता और प्रेम का भाव ही सर्वोपरि– श्रीराम द्वारा देवी शबरी के झूठे बेर खाने की घटना सिर्फ सामाजिक समरसता का सन्देश ही नहीं देती अपितु यह सिखाती है कि सम्पूर्ण निष्ठा और प्रेम समस्त गुणों में सर्वोपरि होते हैं। यह कथा यह भी सिखाती है कि जहाँ श्रद्धा है, वहीं वास्तविक व्यक्तित्व विकास छिपा है। माता शबरी जिसे अपनी श्रद्धा पर पूर्ण विश्वास था कि एक दिन प्रभु से साक्षात्कार होगा, इसी उम्मीद में वर्षों तक झूठे फल अर्पित करती रही। यह श्रद्धा व्यक्ति में आतंरिक प्रेरणा जगाती है।

और इसी आंतरिक प्रेरणा को वर्त्तमान प्रबंधन के विशेषज्ञ मोटिवेशन कहते हैं। यही आतंरिक प्रेरणा और श्रद्धा वीर विनायक दामोदर सावरकर को नारकीय परिस्थितियों में भी बेड़ियों की नयी भाषा बनाकर सेलुलर जेल में वन्देमातरम का उदघोष करवाती है तो दूसरी ओर विदेश में पल रहें मदनलाल धींगरा को वायली को मारने की प्रेरणा जगाती है।

4. उत्साह– उत्साह निर्जीवों को भी प्राणवान बनाने का सामर्थ्य रखता हैं। अपने बल और मौलिक सार्मथ्य को भूल जाने के कारण हनुमानजी सागर पर छलांग नहीं लगा पा रहे थे। ज्योंही जाम्बवंत द्वारा उन्हें आतंरिक शक्ति का भान हुआ और मन में कुछ कर गुजरने का उत्साह जागा, तो उन्होंने विराट सागर लाँघ लिया। किसी कवि ने कहा है कि–

"संभव क्या असंभव क्या, यह तो सब आडम्बर है,
पहचानो उस शक्ति को, जो तुम्हारे अंदर है।"

5. धर्म की विजय– धर्म का अर्थ पूजा पद्धति नहीं अपितु कर्तव्यपथ और नैतिकता का बोध है। नैतिकता सदैव जीतेगी। धर्म सदैव सर्वोच्च होगा. अनैतिक आचरण कभी सफल नहीं होगा। धर्म की प्रतिष्ठा, नैतिकता और मूल्यों की स्थापना रामायण का मर्म है। अतिबलशाली रावण, बेहतरीन शिक्षाविद रावण, समूचे विश्व को जीतने वाला रावण, सिर्फ इसलिए परास्त हो गया क्योंकि उसका आचरण अनैतिक था और वह अधर्म के पथ पर था. वर्तमान युवाओं को चाहिए कि वे धर्म को अर्थ और काम से ज्यादा महत्ता दें और कर्तव्यपथ को कीर्तिपथ बना दें।

भाषा, हिंसा और मीडिया

ब्रजरतन जोशी
वरिष्ठ व्याख्याता (हिन्दी)
हिन्दी विभाग, राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर।

जीवन और भाषा अपनी प्रकृति में जितने सरल हैं उसके मुकाबले मानव स्वभाव की सरलता दिन–ब–दिन जटिलता में परिवर्तित होती जा रही है। भाषिक हिंसा की दृष्टि से अगर हम गौर करें, तो पाएँगे कि दिन–ब–दिन हमारे भाषिक व्यवहार में अनावश्यक तेजी, चोटिल करने की प्रवृत्ति और गम्भीरता को सरलीकरण में बदलना, विकार को विचार बनाने की अनावश्यक कोशिश करना, लोभ और आकर्षण के लिए समाचार पत्रों, न्यूज रूमों के जरीये खबरों को द्विअर्थी भाषा में अभिव्यक्त करना उसे चमकीला, भड़कीला, चटपटा और भटकाने वाले वाक्य की संरचना में आबद्ध करना इसी कोटि में आएँगे।

भाषा और हिंसा जीवन के चिरसंगी हैं। भाषा का संबंध जीवन के सभी क्षेत्रों से है, पर हिंसा का संबंध जीवन से तो है, पर उसके सभी क्षेत्रों से नहीं। संसार की सभी नस्लें भाषा को बेहतर और महत्तर मानती रही हैं, पर हिंसा को भी सबने वांछनीय नहीं माना है।

अस्तित्त्व गतिमान है। हर पल हर क्षण नया है। पर मानव का मन अपनी संस्कारबद्धता के कारण कुछ पुरानी प्रतिक्रियाएँ दोहराने को विवश है। इसी कारण देश, काल और मानव मन के मध्य अंतराल का जन्म होता है। यही स्थिति जीवन और अन्तर्मन के बीच तनाव के उत्स का मूल कारण बनती है। वर्तमान के प्रति समग्र रूप से सजग, सचेत रहना अत्यन्त कठिन है। कोई–कोई महापुरुष ही इस तनाव या दूरी को पाटकर एकमेक हो जाते है। पर सामान्यजन के लिए तो यह नितान्त ही कठिन है। ऐसे में चंचल मानव मन कई नए रास्तों की खोज करता है ताकि वह इस सीधी टकराहट से बच सके। मनुष्य और पशु में पशु अधिक प्रामाणिक है क्योंकि वह हर घटना, तथ्य व स्थिति से सीधे मुठभेड़ करता है, वह झूठ नहीं बोल पाता। इसका एक कारण पशु के पास भाषा एवं विचार का अभाव है। जबकि मानव के पास तो दोनों ही उपलब्ध हैं। इसीलिए कालान्तर में मानव को राजनीतिक प्राणी भी कहा गया। इस राजनीति के विस्तार ने ही संपूर्ण मानव को समाज को भाषायी विक्षप्तता से ग्रसित कर दिया है। हमारे समय के प्रसिद्ध विचारक उम्बेर्तो इको इन्हीं द्वन्द्वात्मक एवं विभ्रमात्मक परिस्थितियों को रेखांकित करते हुए अपनी मशहूर पुस्तक ट्रेण्डस इन हायर रियेलिटी में इस पर विस्तार से चर्चा करते हैं कि मानव की इस अद्‌भुत यात्रा में अपेक्षित या प्रतीक्षित तो कुछ और था और उपलब्ध कुछ और ही हुआ।

इको का यह वचन भाषा के बारे में तो बहुत ही ज्यादा सही बैठता है। भाषा का मूल ध्येय है जीवन के सभी रूपों, कार्यों और आयामों (इसमें अच्छा–बुरा, पवित्र–अपवित्र सब शामिल है) को संप्रेषित करें। डॉ. राममनोहर लोहिया तो भाषा के लिए कहा करते थे कि भाषा एक रथ है। रथ का काम है सबको ढ़ोए।2 यहाँ सबको से उनका तात्पर्य है कि समाज में व्याप्त समस्त तरह के क्रिया व्यापार और उनकी अभिव्यक्ति। रथ के यहाँ मानी है वाहक यानी वाहक से कोई अभिव्यक्ति अभिव्यक्त होने से वंचित न रहे। अब जो अपेक्षित और प्रतीक्षित से उपलब्ध के बीच की यात्रा है उसी में हिंसा को उदय, विकास, परिष्कार की कहानी छुपी है।

मनोवैज्ञानिक इस तथ्य को मानते हैं कि हिंसा का उत्स क्रोध नामक संवेग से है। प्रख्यात वैज्ञानिक डार्विन ने भी मनुष्य और पशु दोनों में ही क्रोध की उपस्थिति को दर्ज किया। तंत्रिका वैज्ञानिक तो यह भी साबित कर चुके हैं कि हमारे तंत्रिका तंत्र में भी क्रोध से जुड़ी प्रक्रिया अन्य संवेगों की प्रक्रिया से भिन्न है। यानी क्रोध जीवन के केन्द्र में एक अहम भूमिका को लिए है। क्रोध वैसे तो एक जैविक

प्रतिक्रिया है, जो जीवन के परिसर में आसानी से दृष्टिगत की जा सकती है। हम सामान्यतः क्रोध करते भी हैं और दूसरों के क्रोध का शिकार भी होते हैं। इस अनुभव की अनुभूति साहित्य और मीडिया के जरीये हमें होती ही रहती है। इस क्रोध का मूल है अहम्। अर्थात् जब–जब अहम् को ठेस पहुँचेगी तब–तब वह क्रोध अहम् का सेनापति बनकर अपने शत्रुदल पर टूट पड़ेगा। हालांकि क्रोध अन्तर्मन की प्रतिक्रिया है। पर होती यह अहम् के चोटिल होने से ही है। इसका प्रकटन बहुविध होता है। जैविक दृष्टि से तो यह जन्मजात नैसर्गिक प्रवृत्ति है। कुछ वैज्ञानिक इसे आनुवांशिक करार देते हैं। पर प्रसिद्ध मनसविद् प्रो. गिरिश्वर मिश्र के शब्दों में कहे तो ऐसा प्रतीत होता है कि क्रोध और आक्रमकता की रचना प्रकृति और संस्कृति दोनों का ही फल है।

यहाँ प्रो.मिश्र जिस संस्कृति की ओर इशारा कर रहे हैं, वह अपने स्वार्थ साधन को प्रमुखता देने वाली है। मनुष्य के अपरिपक्व एवं अदूरदर्शी रवैये ने भाषा में हिंसा की जड़ों का सींचन किया है। आज तो मनोविज्ञान भी स्वछंद के स्व को वरीयता एवं प्राथमिकता दे रहा है। इसलिए जब भी मैं और हम का आमना–सामना होता है तो वरीयता मैं ही होती है। हम पिछड़ता जाता है।

इधर मनोवैज्ञानिक को ही एक और समूह जिसका नेतृत्व एरिक फ्राम जैसा मनसविद् करता है, वे यह मानते हैं कि फ्रायड व लोरेंज जैसे विद्वानों का यह मानना ठीक नहीं है कि आक्रामकता, जिसे स्व का प्रतिनिधि लक्षण देकर वरीयता दी जा रही है, मनुष्य में अर्न्तजात नहीं है। एरिक फ्राम तो इसे एक मनोरोग मानते हैं जो वह परिवेश से अर्जित करता है। वे हिटलर के उदाहरण से इसे स्पष्ट भी करते हैं। अब प्रश्न उठता है कि फिर मनुष्य जीवन में हिंसक व्यवहार क्यों करता है? इस हिंसा के अभिप्रेरक या कारक तत्त्व कौन–कौन से हैं? जोहान गाल्तुंग ने इस प्रश्न का उत्तर अपनी सैद्धान्तिकी संरचनात्मक हिंसा के माध्यम से देने की कोशिश की है। गाल्तुंग यह मानते हैं कि बुनियादी मानव आवश्यकताओं और सामान्य जीवन का निवारणीय अनादर हिंसा है।4 यह संरचनात्मक हिंसा चार मुख्य मार्गों से जीवन में प्रवेश करती है – 1. शोषण, 2. निर्बलीकरण, 3. विखण्डीकरण, 4.दमन। इन चारों का मूल भी शोषण ही है। क्योंकि जब–जब भी सामाजिक, राजनीतिक, पारिस्थितिक और आर्थिक स्तर पर एक वर्ग दूसरे वर्ग को जीवन के मूल घटकों एवं अवसरों से वंचित करता है तब–तब हिंसा प्रकट होती है। उदाहरण के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध इस्तमाल बेतहाशा हो रहा है। ये जीवन घटक अपने अस्तित्व में ही सार्वजनिकता को समाऐ हैं। इन पर किसी एक वर्ग, नस्ल या सत्ता का अधिकार अन्याय है। ये तो संपूर्ण मानव जाति की थाती है। दूसरी तरह से इसे इस तरह भी कहा जा सकता है कि वर्तमान मानव समाज ने जो विकास की अपनी यात्रा तय की है और जिस पर वह अग्रसर भी है वह भविष्य के नागरिक के विकास की धारणा को मुश्किल बनाती है। यह सनातन न्याय (International Jistic) के विपरीत है। इसी तरह समाज में भी व्यक्ति, समूह, भाषा, लिंग, जाति, नस्ल, संप्रदाय के आधार पर असमान व्यवहार किसी तरह से न्यायोचत नहीं है।

अब चूंकि समाज में अभिव्यक्ती का माध्यम भाषा है। अतः ये समस्त हिंसाएँ भाषा के जरीये यही हमारे सामने आती है। भाषा की अपनी कोख से हिंसा के दो रूप संभव होते हैं। एक तो यह कि अपने तंत्र या व्यवहार में किसी वर्ग या समूह के प्रति अन्यायपूर्ण अभिव्यक्ति दूसरे उसके मुहावरे–विन्यास में आबद्ध मनःचेतना। दोनों उसमें हिंसक व्यवहार के बीज जाने–अजाने में बो देते हैं। परिणामस्वरूप आज हमारे मध्य हिंसा के विविध रूप विद्यमान हैं।

वैसे तो भाषा में व्याप्त रही इस हिंसा को आम बोलचाल के व्यवहार से लेकर साहित्य की विविध विधाओं के परिसर में भली–भाँति देख और अनुभूत कर सकते हैं, पर मीडिया के मंच पर जिस तरह से भाषा के सत्व और शीलहरण की अनथक कोशिशे अविराम जारी हैं, यह भावी जीवन के लिए अत्यन्त चुनौतिपूर्ण है। जीवन और भाषा अपनी प्रकृति में जितने सरल हैं उसके मुकाबले मानव स्वभाव की सरलता दिन–ब–दिन जटिलता में परिवर्तित होती जा रही है। भाषिक हिंसा की दृष्टि से अगर हम गौर करें, तो पाएँगे कि दिन–ब–दिन हमारे भाषिक व्यवहार में अनावश्यक तेजी, चोटिल करने की प्रवृत्ति और गम्भीरता

को सरलीकरण में बदलना, विकार को विचार बनाने की अनावश्यक कोशिश करना, लोभ और आकर्षण के लिए समाचार पत्रों, न्यूज रूमों के जरीये खबरों को द्विअर्थी भाषा में अभिव्यक्त करना उसे चमकीला, भड़कीला, चटपटा और भटकाने वाले वाक्य की संरचना में आबद्ध करना इसी कोटि में आएँगे। चिल्ला–चिल्लाकर अपनी बात कहना, रोमांचकारी शब्दों का प्रयोग करना एवं विभ्रम और संदेह के आवकरण में लिपटी भाषा का प्रयोग करना भी भाषिक हिंसा की श्रेणी में गिना जाएगा।

हमारे समय में मीडिया असीमित शक्ति सम्पन्न क्षेत्र है। व्यापक जन–समुदाय का विराट प्रतिनिधि है। अगर उसका चरित्र और व्यवहार हिंसक होगा, तो जन–जीवन में हिंसा के प्रवेश के रास्ते अधिक सुगम होंगे। अतः आवश्यकता इस बात की है कि मीडिया भाषा और हिंसा के मुद्दे पर गंभीरता से विचार करे और जीवन से छिटकते जीवन के हिंसक होते चरित्र को अधिक सात्विक और मानवीय बनाएँ, ताकि भावी जीवन और मनुष्यता की जड़ें और गहरी हो सकें।

सारतः हमें यह जानना व समझना होगा कि हिंसा जीवन का अनादर व अपमान है। इसलिए जब तक हम अपने धर्म, विचार, कला एवं विज्ञान के जरीये जीवन कप्रति सम्मान का भाव विकसित नहीं कर पाएँगे, तब तक भाषा के विविध माध्यमों से समाज में हिंसा के प्रचार–प्रसार का यह क्रम अनवरत जारी रहेगा। अतः हमें जीवन ही नहीं वरन् समग्र अस्तित्व के एकत्व बोध की राह पर आगे बढ़ना होगा। विचार इसमें अहम् भूमिका निभा सकता है। क्योंकि समस्त असंतुल विचार की पैदाईश है।

विचार का मूल कार्य है किसी समस्या का समाधान सुलझाना। लेकिन जब हम पाते हैं कि यह विचार ही समस्या की जड़ हो गया है, तो हमारे लिए विसंगति को, जिसे प्रसिद्ध भौतिकविद् डेविड बोम संपोषित असंगति कहते हैं, दूर करना कठिन हो जाता है। डेविड बोम कहते हैं कि यह समझना गलत होगा कि प्रत्येक व्यक्ति एक अलग सत्ता है, जो ममेतर या अन्य से, प्रकृति से अंतःक्रिया करता है। ये सभी एक ही समग्र के प्रक्षेप हैं। इसलिए कोई व्यक्ति जब समग्र के रूपान्तरण की प्रक्रिया में भागीदारी करता है, तो वह स्वयं भी रूपान्तरित हो जाता है।4 यानी मनुष्यता को यह समझना होगा कि अलगाव एक भ्रम मात्र है। यही हिंसा का मूल भी है। अतः जब हम मूल समस्या का शमन नहीं करेंगे, तो स्थूल की समस्याएँ समाप्त नहीं होगी और जब तक हम समस्या के ह्रत केन्द्र पर प्रहार नहीं करेंगे समस्याएँ जस की तस बनी रहेगी।

संदर्भ
1. शब्द संसार : कैलाश वाजपेयी, पृ.सं. 41
2. डॉ. राममनोहरलोहिया के विचार, : सं. ओंकार शरद, पृ.सं. 167
3. अहिंसा विश्वकोष, : सं. नन्दकिशोर आचार्य, पृ.सं.110
4. जोहान गाल्तुंग, : विकीपीडिया
4. डेविड बोम, अंतर्वलित जीवन, : विकीपीडिया

राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की उन्नति के लिए आवश्यक है।

–महात्मा गांधी

मेरी परछाईं

बिखरती परछाईं को बटोरने चला था, उन लम्हों को संजोने चला था
जो झिलमिल से आते थे, आंधी जैसे आँखों में धूल झोंक जाते थे
मुठ्ठी से बिखरती रेत की तरह, पकड़ू अपनी परछाईं को किस तरह
पीछा जिसका करने चला था, कभी उसे अपना कहने चला था
कभी उसे पकड़ना चाहता हूँ, तो कभी उस परछाईं से डरता हूँ
अंगड़ाई की परछाईं को कैसे थामू, पकड़ते ही जो बिखर जाये उसे कैसे दबोचूं
कभी परछाईं आगे चलती है, तो कभी भूत बन कर मुझे डराती है,
झूमती बल खाती परछाईं दीवानी सी हुई घूमती है, जानते हुए भी अनजान सी बनी घुमती है
दिलचस्प परछाईं की आग बुझाये नहीं बुझती, प्रतिबिम्ब बनाती रौशनी ही राह दिखाती है व
दूर होते ही परछाईं बनकर दीवानों की पतलून ढीली करवाती है
मेरी परछाईं के दो स्वरूप है पहला मेरे आकार का बोध कराता है,
दूसरा स्वरूप मानसिकता को दर्शाता है
दिमाग की परछाईं को कोसता हूँ, तो कभी अपनी प्रगति को उस परछाईं
का प्रतिबिम्ब मान कर पूजता हूँ
परछाईं से ही आकृतिओं को बोध कराता हूँ, कभी डराता हूँ तो कभी धमकाता हूँ
मेरे पीछे भागना व्यर्थ होगा, यही तो जीवन का अर्थ होगा
अंगड़ाई की परछाईं को जान लो, अगर बोध हो जाये तो यह ज्ञान बाँट दो
इससे पहले की तूफान में लीन हो जाऊं,
मैं चाहता हूँ अपने मूल की परछाईं से जाना जाऊं
मैं चाहता हूँ अपने मूल की परछाईं से जाना जाऊं

राजेश कुमार सावल
प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

कौशल सिखाता है आदर्श प्रशिक्षण

संगीता सेठी
प्रशासनिक अधिकारी प्राचार्य (ए.टी.सी.)
अम्बिकापुर म.का.शहडोल

प्रशिक्षण कार्यक्रमों की महत्ता सदियों से रही है । विद्यालय के पाठ्यक्रम से लेकर जिन्दगी जीने के पाठ्यक्रम तक एक महत्वपूर्ण कड़ी का काम करता है । हम और हमारा समाज शिक्षण और प्रशिक्षण में भेद नही कर पा रहा ।

अपना विद्यालय समय याद करती हूँ तो याद आता है कि हमारे माता–पिता और शिक्षक केवल शिक्षण पर केन्द्रित करते थे। किताबी ज्ञान को इस कदर विद्यार्थी पर थोपा जाता था कि वो केवल किताब की जोंक बन कर रह जाता था। यद्यपि विद्यालय में किताबी ज्ञान के अलावा

सह क्रियाओं के रूप में खेलकूद, भाषण, लेखन उद्योग जैसे विषय थे जिन्हें ना केवल विद्यार्थी मखौल में उड़ा देते थे बल्कि शिक्षक भी उन्हें हल्के रूप में लेते थे वो दौर गुजर गया और उसका हश्र यह हुआ कि विद्यार्थियों के लिए वो किताबी ज्ञान रोजगार के क्षेत्र में नासूर बन कर रह गया है । आज फिर से समझ में आ गया कि शिक्षण के साथ प्रशिक्षण कितना जरूरी है। शिक्षण सैद्धांतिक ज्ञान अवश्य दे सकता है लेकिन प्रशिक्षण उन गुणों को व्यवहार में लाना भी सिखाता है आज के विद्यालयों में बच्चों को आरम्भिक तौर से ही विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण देकर उनकी रुचि को जागृत किया जाता है ताकि भविष्य में स्वेच्छा से अपनी आवश्कतानुसार के अनुसार क्षेत्र विशेष में कौशल प्राप्त कर सके । आदर्श प्रशिक्षण वह है जो कक्षा में श्याम पट्ट पर चाक से लिख कर ना दिया जाए बल्कि उसे कक्षा से बाहर उसी परिस्थिति में जाकर प्रशिक्षण दिया जाए कम्प्यूटर का ज्ञान देना है तो प्रशिक्षणार्थियों को कम्प्यूटर के सामने घण्टों बैठाकर ज्ञान देना होगा। इसी तरह बिजली का प्रशिक्षण बिजली के उपकरणों के बीच देना ही सम्भव है। प्रशिक्षण के लिए आदर्श वातावरण देना भी प्रशिक्षण कार्यक्रम को मजबूत बनाता है। प्रशिक्षण के लिए पूर्व योजनाओं हेतु खुशनुमा माहौल में की गई बातचीत प्रशिक्षणार्थियों के मस्तिष्क को स्वीकार करने में मदद करती है। अमेरिका की हावर्ड यूनिवर्सिटी में प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षण देने से पूर्व या कोई कार्य सौंपने से पूर्व उन्हें किसी बाग में ले जाकर मौज मस्ती करवाई जाती है ताकि उनका मस्तिष्क तरोताजा हो फिर उन्हें प्रशिक्षण कार्यक्रम की ओर ले जाया जाता है। राजस्थान का तिलोनिया गाँव प्रशिक्षण के क्षेत्र में विश्व के लिए आदर्श गाँव बन गया है जो विश्व प्रसिद्ध समाज सेवी श्री बुनकर रॉय के प्रयासं का फल है । बुनकर रॉय ने विदेशी शिक्षा के बाद राजस्थान के इस गाँव को प्रशिक्षित करने का निर्णय लिया। " बेयर फुट कॉलेज " के नाम से विख्यात यह संस्था वास्तव में यह सिद्ध करती है कि कम शिक्षा प्राप्त व्यक्ति भी कठिन से कठिन कार्य में दक्ष हो सकता है ।

तिलोनिया गाँव जाकर गाँववासियों से मिलने के बाद मेरे दिलो–दिमाग से यह बात स्पष्ट हो गई कि शिक्षण और प्रशिक्षण में क्या अंतर है। मात्र तीसरी कक्षा उत्तीर्ण गीता देवी कम्प्यूटर का इतना ज्ञान रखती है जितना एक कम्प्यूटर का ज्ञान लिए हुए दक्ष विद्यार्थी विन्डोज का कार्य देखता है। राजस्थानी लहंगे में माथे तक आए दुपट्टे से विन्डोज 7 पर तिदेव फोण्ट पर सधी हुई उंगलियों से गीता देवी को टाइप करते देख आश्चर्य होता है। गीता देवी पूरी संस्था की विडियो लाइब्रेरी सम्भाले हुए हैं और सी.डी. बनाना, बर्न करना, साइट पर लोड करना जैसे कार्य बेहद सहजता से कर लेती हैं ।

दसवीं कक्षा उत्तीर्ण आरती देवी ना केवल पूरे परिसर में आए आगंतुकों की गाइड है बल्कि गाँव का अपना एफ.एम रेडियो की तकनीकी सहायक और उदघोषिका भी है । इसके अलावा पूरे विश्व की महिलाएँ और पुरुष यहाँ सौर ऊर्जा सम्बन्धी प्रशिक्षण लेने आते है। कुछ ऐसे गाँवों से भी लोग आते हैं जो सौर ऊर्जा से बिजली पैदा करने का प्रशिक्षण लेते हैं और अपने गाँव में जाकर बिजली स्थापित करते हैं। गौर तलब बात यह है कि इतना महत्त्वपूर्ण

प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले मात्र पहली दूसरी या तीसरी कक्षा तक ही पढे हैं । यहाँ आने वालों में अफ्रीकी फिलिस्तीन मॉरिशस जैसे देशों के नागरिक हैं ।

इसके अलावा दंत चिकित्सक, फिजियोथेरेपिस्ट ,कलाकार ,जल पर शोध करने वाले लोग भी शामिल है प्रशिक्षण के द्वारा अपने क्षेत्र में दक्ष बने हुए हैं ।

बुनकर रॉय द्वारा स्थापित इस बेयर फुट कॉलेज ने दुनिया को यह सिखा दिया कि इंसान अगर शिद्दत से सीखे और सिखाए तो वह पूर्ण कौशल को प्राप्त कर सकता है। आज हर संस्थान प्रशिक्षण के क्षेत्र में धाक जमाए हुए है। चाहे वो बीमा के क्षेत्र का हो या उष्ट्र अनुसंधान केंद्र, भारत केन्द्रों की पूरी श्रंखला ने अपने कर्मचारियों की प्रतिभा को तराश कर उनके व्यक्तित्व में चार चाँद लगा दिए हैं। मण्डल प्रशिक्षण केन्द्र, क्षेत्रीय प्रशिक्षण केन्द्र, प्रबन्धन विकास केन्द्र और राष्ट्रीय बीमा संस्थान के माध्यम से अपने कर्मचारियों की प्रतिभा का विकास किया है । तकनीकी क्षेत्र मे जिन कर्मचारियों को कुछ वर्ष पूर्व कम्प्यूटर के कखग का भी ज्ञान नहीं था आज वो कम्प्यूटर पर मुस्तैदी से काम कर रहे हैं । आज के दौर में व्यक्ति के विकास के लिए ही नहीं बल्कि देश के विकास के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता है ताकि प्रशिक्षण से उपजे कौशल से देश का भविष्य संवर सके ।

कबूतर

घर की छत पर आए
बहुत से कबूतरों को
मैंने देखा और पाया कि
विचित्र प्रेम था सब में
कोई भी लड़ नहीं रहा था
और न ही कोई
तकरार या झगड़ा
दिखाई दिया उनमें
फिर सोचने लगा कि
मनुष्य को तो सब कुछ
दिया है ईश्वर ने
फिर भी ये झगड़ते हैं आपस में
लेकिन कबूतरों के पास
सब कुछ सीमित है
फिर भी ये
प्रेम से रहते हैं!
ऐसा लग रहा था
मानो सभी कबूतर हमें
प्रेम से मिल–जुल कर
रहने का पाठ पढ़ा रहे थे!

परोपकार

मैंने मखमली घास के
तिनकों से पूछा
कैसा लगता है तुम्हें
जब लोग तुम्हें रौंद कर
आगे निकल जाते हैं...?
कष्ट तो होता होगा न
तो आवाज आई
बिलकुल नहीं!
मेरे ऊपर पड़ने वाले
हर पाँव को
मैं सुकून देता हूँ।
ऐसा करने से
इतनी खुशी होती है कि
मैं अपना दर्द ही
भूल जाता हूँ!

–अश्विनी कुमार रॉय
वरिष्ठ वैज्ञानिक
राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान करनाल
हरियाणा

''प्राचीन स्वास्थ्य दोहावली''

'ऊर्जा मिलती है बहुत, पिएं गुनगुना नीर!'
कब्ज खतम हो पेट की, मिट जाए हर पीर!!

'प्रातः काल पानी पिएं, घूंट–घूंट कर आप!'
बस दो–तीन गिलास है, हर औषधि का बाप!!

'ठंडा पानी पियो मत, करता क्रूर प्रहार!'
करे हाजमे का सदा, ये तो बंटाढार!!

'भोजन करें धरती पर, अल्थी पल्थी मार!'
चबा–चबा कर खाइए, वैद्य न झांकें द्वार!!

'प्रातः काल फल रस लो, दुपहर लस्सी–छाछ!'
सदा रात में दूध पी, सभी रोग का नाश!!

'प्रातः– दोपहर लीजिये, जब नियमित आहार!'
तीस मिनट की नींद लो, रोग न आवें द्वार!!

'घूट–घूट पानी पियो, रह तनाव से दूर!'
एसिडिटी, या मोटापा, होवें चकनाचूर!!

'अर्थराइज या हार्निया, अपेंडिक्स का त्रास!'
पानी पीजै बैठकर, कभी न आवें पास!!

'रक्तचाप बढ़ने लगे, तब मत सोचो भाय!'
सौगंध राम की खाइ के, तुरत छोड दो चाय!!

'देर रात तक जागना, रोगों का जंजाल!'
अपच,आंख के रोग सँग, तन भी रहे निढाल''

'अल्यूमिन के पात्र का, करता है जो उपयोग!'
आमंत्रित करता सदा, वह अडतालीस रोग!!

'फल या मीठा खाइके, तुरत न पीजै नीर!'
ये सब छोटी आंत में, बनते विषधर तीर!!

'चोकर खाने से सदा, बढती तन की शक्ति!'
गेहूँ मोटा पीसिए, दिल में बढे विरक्ति!!

'रोज मुलहठी चूसिए, कफ बाहर आ जाय!'
बने सुरीला कंठ भी, सबको लगत सुहाय!!

'भोजन करके खाइए, सौंफ, गुड, अजवान!'
पत्थर भी पच जायगा, जानै सकल जहान!!

'लौकी का रस पीजिए, चोकर युक्त पिसान!'
तुलसी, गुड, सेंधा नमक, हृदय रोग निदान!

'चौत्र माह में नीम की, पत्ती हर दिन खावे !'
ज्वर, डेंगू या मलेरिया, बारह मील भगावे !!

'सौ वर्षों तक वह जिए, लेते नाक से सांस!'
अल्पकाल जीवें, करें, मुंह से श्वासोच्छ्वास!!

'हृदय रोग से आपको, बचना है श्रीमान!'
सुरा, चाय या कोल्ड्रिंक, का मत करिए पान!!

'अगर नहावें गरम जल, तन–मन हो कमजोर!'
नयन ज्योति कमजोर हो, शक्ति घटे चहुं ओर!!

'तुलसी का पत्ता करें, यदि हरदम उपयोग!'
मिट जाते हर उम्र में, तन में सारे रोग।

'अलसी, तिल, नारियल, घी सरसों का तेल!'
यही खाइए नहीं तो, हार्ट समझिए फेल!

संकलन :
श्री हरपाल सिंह कौण्डल
वैयक्तिक सहायक, भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट : एक विलक्षण जीव

विजय कुमार धमीजा
वरिष्ठ साहित्यकार, बीकानेर

रेगिस्तान की प्राणवायु कहां जाने वाला यह जीव ऊँट विश्व में इतना प्रिय है कि संपूर्ण जगत का पर्यटक इसे देखकर अपने कैमरे में बंद करने को सदैव लालायित रहता है यही कारण है इसके के सैंकड़ों नाम है कहीं यह करम है तो कहीं कमी लो कोई इसे उस पर कहता है तो कोई काम मिल कहीं यह सिंह के नाम से जाना जाता है तो कहीं ग्रुप में डाल परंतु भारत में यह उनके नाम से ही विख्यात है

ईश्वर की लीला बहुत ही विचित्र है। उसने प्रकृति के नाम पर जहां हिमालय को ऊँचाइयां प्रदान की वहीं गंगा जमुना के मैदानी भाग भी दिए जहां पठारी भूमि का निर्माण किया वही समुद्र की गहराइयां भी दी। जहाँ चारों ओर फूल पत्तियां वृक्षों को हरियाली और फूलों को रंग दिए वही विशालतम रेगिस्तान भी दिए। इन सब स्थलों पर नाचते, गाते, उछलते– कूदते, गुनगुनाते लगभग 84 लाख प्रकार के जीव जंतु भी दिए जिन्हें भारतीय दर्शन ने 84 लाख योनियां कहा है। मेरे विचार में हाथी जैसे विशालकाय जानवर के बाद दूसरे नंबर पर यदि कोई जीव आज दिखाई देता है तो वह उष्ट्र यानी ऊँट है।

रेगिस्तान की प्राणवायु कहां जाने वाला यह जीव विश्व में इतना लोकप्रिय है कि संपूर्ण जगत का पर्यटक इसे देखकर अपने कैमरे में बंद करने को सदैव लालायित रहता है, यही कारण है कि उसके सैंकड़ों नाम है कहीं यह करभ है तो कहीं कामीलो कोई इसे उस पर कहता है तो कोई कामील कहीं यह शैमू के नाम से जाना जाता है तो कहीं ड्रोमेदार में परंतु भारत में यह ऊँट नाम से ही विख्यात है। इटेलियन, फ्रेंच, स्पेनिश व जर्मन भाषाओं के उपरोक्त संबोधनों के अतिरिक्त यूरोप के अन्य देशों तथा राष्ट्रमंडल के 51 देशों में यह कैमल के नाम से ही विख्यात है। रेत के बड़े–बड़े टीलों के बीच फुल स्पीड दौड़ता विचरता रेगिस्तान का जहाज रेगिस्तान के जन जीवन का प्राण है जो कुएं से पानी खींचना, खेत में हल चलाना अपनी पीठ पर बैठा कर मालिक को कहीं भी ले जाना, 10 टन के माल को गाड़ों पर रख कर उसे खींचकर मालिक के गंतव्य स्थल पर पहुंचाने से लेकर रेगिस्तान में बनी देशों की सीमाओं की रक्षा करना, उनकी चौकसी करना जिस रेतीले स्थानों पर 50 हॉर्स पावर वाले इंजिनों से निर्मित वाहन भी नहीं चल पाते, वहां अपने गद्देदार पावों की सहायता से सारे काम सुगमता से कर लेना और इसके पश्चात 7 से 10 दिनों तक बिना जल एवं भोजन के रह लेना यह विलक्षण प्रतिभा नहीं तो और क्या है ? बीकानेर के सर्वाधिक लोकप्रिय ''महाराजा गंगासिंह'' जी ने तो ऊँटो पर सवार पूरी सेना ही गंगा रिसाला के नाम से बना दी थी जिसने द्वितीय विश्वयुद्ध में अपनी क्षमता के बल पर विपक्ष की सेनाओं को घुटने टेकने के लिए मजबूर कर दिया था। मनुष्य के सामाजिक तथा आर्थिक ढांचे को जहां इस जानवर ने संवारा है वहीं मनुष्य का धार्मिक क्षेत्र भी इसकी महिमा से अछूता नहीं है, लोक देवता पाबूजी से लेकर पुष्करणा समाज के कुलदेवी ''उष्ट्रवाहिनी'' वह आने तक का इतिहास इस ऊँट नामक प्राणी का गुणगान करता है, केवल सामाजिक आर्थिक और धार्मिक ढांचा ही नहीं अपितु मनुष्य के कलात्मक रचना संसार में भी यह जानवर अपना विशिष्ट स्थान रखता है इस चार लंबी लंबी टांगों तथा लंबी सी गर्दन वाले जानवर पर असंख्य कविताएं रची गई बीकानेर के लोकप्रिय विधायक नंदू महाराज की निजी ऊँट की आंखें तो इतनी कजरारी थी कि लोकनायिका की आंखो का काजल व सुंदरता उस ऊँट की आंखों के सामने शरमाता था। यह 'काजलियो' नामक ऊँट जब नृत्य करता था तो लोग दांतो तले अंगुली दबा दबाने को मजबूर हो जाते थे।

इसके विशाल शरीर पर बालों की हेयर कटिंग से बनने वाली कला तो विश्व विख्यात है। फरकटिंग इसके

शरीर पर विभिन्न लोककथाओं को करना अपने आप में किसी भी रोमांच से कम नहीं है जरा सामने के चित्र को कलात्मक नयनों से निहारिये तो हृदय में एक आल्हादित सा मनोभाव जाग जाता है इस जानवर के दूध को न केवल रेगिस्तान के निवासियों को पाला–पोसा है अपितु इसके औषधीय एवं देवीय गुणों ने इन लोगों को अनंत काल तक बलिष्ठ रखा है। जोधपुर, बीकानेर, बाड़मेर व जैसलमेर से लेकर थारपारकर क्षेत्र तक के उन मूल निवासियों तथा ऊँट पालकों के चित्रों पर एक नजर डाले तो उनके चेहरों से टपकने के वाला तेज तथा ओज बरबस ही आप को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है।

जैसा कि हाथी के बारे में कभी कहा जाता था। कि ''जिन्दो हाथी एक लाख को मरीयो हाथी डेढ़ लाख को'' यह उक्ति इस जानवर पर भी सटीक ही बैठती है अपने जीवन काल में इस जानवर ने अपनी कार्यक्षमता दैनिक उपयोगिता, अपने दूध एवं वर्ष में एक बार काटे जाने वाले बालों से अपने पालक को पाला है वही अपनी जीवन लीला समाप्ति पर अपने चमड़े तथा अपने अस्थियों को भी मनुष्य की उपयोगिता मे लगा दिया है।

इसके बालों से नोखा तहसील के कक्कू नामक गांव में कंबल, दरियां गलीचे, खेस आदि का निर्माण इसके पालक कर रहे हैं जहां उन्हें तकनीकी आधुनिक ज्ञान देकर इस क्षेत्र को विकसित किया जा सकता है ताकि इन उत्पादों को कलात्मक रूप देकर इनकी उपयोगिता विकसित हो इसके डंग यानी वेस्ट जिसे सामान्य भाषा में 'लेदना' कहते के नाम से जाना जाता है जो कि छोटे गोल लड्डू के आकार का होता है और उसे सुखाकर पेड़ की छाल के साथ मिलाकर है। पाली जिले में पेपर के रूप में बनाया जा रहा है। जिस पर वह संस्थान ग्रीटिंग कार्ड बना रहा है। इसलिए के लेखक ने उस उस मोटे कागज पर अपनी कलाकारी से ऊँट के चित्र तथा तथा भगवान गणेश के चित्रों की पेंटिंग्स बनवाकर इस जानवर की उपयोगिता दर्शाइ इसके चमड़े की उपादेयता का तो कोई जवाब ही नहीं प्राचीन काल की पगरखी (जूती) से लेकर आज

आधुनिक काल के लैपटॉप के कवर तक इस के चमड़े से बनाए जाते हैं। प्राचीन समय में देसी घी को सहेज कर रखना, उसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने हेतु 10 सेर से 20 सेल (आज के किलो के स्थान पर प्रयुक्त होने वाले भार की इकाई) तक की कलात्मक कुप्पियों का निर्माण इस चमड़े से ही होता था। एक स्थान से दूसरे स्थान पर पानी ले जाने के लिए भी जिस ''मशक'' या ''परवाल'' नामक साधन का प्रयोग किया जाता था, वह ऊँट के चमड़े से बनता था। 'मशक' जो कि आजकल के बैग पाईपर के आकार की होती थी, इसे मनुष्य अपनी पीठ तथा कन्धे पर बेल्ट की सहायता से लटकाकर लगभग 50 लीटर पानी एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाता था तथा 200 लीटर पानी ऊँट पर 'परवाल' रख कर उसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाया जाता था। पश्चिमी राजस्थान की प्राण कही जाने वाली इन्दिरा गांधी नहर के निर्माण के समय रेत के बड़े–बड़े टीबों के बीच नहर निर्माण तथा इसमें लगे हजारों श्रमिकों के लिए पानी इन्हीं परवालों तथा ऊँटों पर ही भेजा गया जो किसी अन्य साधन से संभव नहीं था। यह परवाल ही मशके का तीन से चार गुणा बड़ा रूप था जो ऊँट की पीठ के दोनों ओर लटका दिया जाता था। इसके चमड़े से आज फ्रेन्डशिप बेल्ट, विभिन्न आकार एवं प्रकार के महिलाओं एवं पुरुषों के पर्स, पानी की बोतल का कवर, मोबाईल कवर, बुक कवर, बैठने की तीन टांगों वाली स्टूल, छोटे छोटे नटखट बच्चों से लेकर बड़ों तक के पुरुषों एवं महिलाओं की जूतियों, इन सब उत्पादों पर लाल–पीले,हरे–नीले रंग की कढ़ाई सब का मन मोह लेती है। इसी चमड़े पर जिसे 'कैमल हाइड' कहा जाता है, पर सोने के वर्क से फूल–पत्तियां उकेर कर उस्ता जाति के बन्धुओं ने उस्ता कला के नाम से विश्व में कला के क्षेत्र में अपना परचम फहराया है तथा यहां के स्थानीय उस्ता कलाकारों को असंख्य बार राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित किया गया है तथा पदमश्री सम्मान से सम्मानित भी किया गया है। अपना जीवनकाल समाप्त होने पर चमड़े के अतिरिक्त जिस अन्य वस्तु के उत्पाद ने इस जानवर की विलक्षणता प्रदर्शित की है, वह है इसकी अस्थियां अर्थात कैमल बोन, हाथी दांत जैसी परम्परागत आभा एवं रूप को समेटे कैमल बोन से अनेकों प्रकार के वस्तुएं बनाई जा रही है, मुख्य रूप से तो बोन से ही ऊँट, हाथी, घोड़ा, अम्बा वाड़ी हाथी के टावर, गणेश, म्यूजीशियन का ग्रुप, महिलाओं के पहनने हेतु अनेका डिजायनों में गहने, गले की मालाएं, कान के झुमके, हाथ की चूड़ियां, तथा कड़े, पुरुषों हेतु ब्रेसलेट, बालपेन, बुक मार्क, स्मोकिंग पाईप एवं बटर कटर, फूलदान ज्वैलरी बाक्स आदि आदि और इन सब पर विभिन्न प्रकार की जाली का काम, इन पर पेटिंग्स, नक्काशी का काम, कारविंग आदि ने इन बोन प्रोडक्टस की आभा में चार चांद लगाए हैं। देश विदेश के पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करने वाले ये उत्पाद, केवल कैमल बोन से ही संभव हो पाते हैं क्योंकि यह बोन अन्य जानवररों की बोन की तुलना में लम्बी, चौड़ी व मोटी ज्यादा होती है।

उपरोक्त समस्त तथ्य यह समझने के लिए पर्याप्त है कि ईश्वर द्वारा प्रदत्त विलक्षण क्षमता का यह प्राणी मानव मात्र के लिए कितना मूल्यवान है किन्तु इसके परंपरागत पालक अशिक्षा व अज्ञानता के कारण इस जीव के गुणों का सदुपयोग नहीं कर पा रहे हैं। आधुनिक जीवन शैली और आर्थिक कारणों से ऊँट पालकों का उत्साह इस जीव के प्रति संतोषजनक नहीं है। भला हो केन्द्र सरकार का, जिसकी योजना से एशिया में एक मात्र उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र,बीकानेर में स्थापित कर इस जीव को महत्व प्रदान किया है। यहां के प्रतिष्ठित वैज्ञानिक निरंतर नए–नए अनुसंधान के माध्यम से इस जीव को महत्व प्रदान कर रहे हैं। इसके दैवीय व औषधीय युक्त दूध पर किए गए अनुसंधानों के परिणामों ने तो जन मानस के जीवन में हलचल पैदा कर दी है। अब तो आम नागरिक भी इसके दूध के गुणों से प्रभावित होकर जानकारियों प्राप्त कर रहा है। इसके दूध की चाय, कॉफी, आईसक्रीम तथा खीर तो विख्यात है ही अब दूध के गुण घर घर ग्राम ग्राम तक पहुंचा रहा राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र इस विलक्षण जीव के संरक्षण व संवर्धन का दायित्व निर्वहन कर मानव मात्र की सेवा कर रहा है।

छड़ी

एक छड़ी की ज़रुरत है, जो इक छड़ी इन हाथों में दे सके
ढलती आशओं का प्रतीक है यह छड़ी
हो सकता है इसकी आवश्यकता महसूस हो जाए
दिशा दिखाती हुई छड़ी कार्य करने का संकेत करती है
कम उठी हुई छड़ी अनिश्चत्ता का बोध कराती है
घुटने तक झूलती हुई छड़ी उम्र का बोध कराती है
हाथ मे घूमती छड़ी उच्च ओहदे का बोध कराती है
एक छड़ी कोतवाली के थानेदार की भी याद दिलाती है
जेल में चोर उचक्के भी छड़ी की मार से दुलारे जाते हैं
बहुत सी छड़ियाँ एक गेंद की रेल बनाती हैं
तभी इसे खेलते भारतीय इतना गौरवानित महसूस करते हैं
एक छड़ी ही गुल्ली को धुमाती है वरना वो किसी के हाथ नही आती है।
छड़ी दिखाना ही अंकुश का बोध कराती है
बच्चे अकसर शरारत करते है, छड़ी दिखाकर हम उनको रोकते हैं
तभी तो छड़ी प्रिंसीपल कहलाती है।
छड़ी से पिटे हुए बच्चे बहादुर बन जाते हैं वरना आज की पनीरी
रोती धोतीनज़र आती है।
भागते भागते अपनी छड़ी औरो को प्रोत्साहन देना ही खिलाड़ियो का दायित्व है।
देर से पहुँचने से छड़ी लेने वाले खिलाड़ियो का मनोबल टूटता है।
समय से छड़ी आगे देने से पब्लिक प्रोत्साहन व प्यार मिलता है।

राजेश कुमार सावल
प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

मीडिया, समय और समाज

सुचित्रा कश्यप
व्याख्याता (चयनित वेतनमान)
हिन्दी विभाग, राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर

मीडिया के चरित्र में आई यह तेजी विशिष्ट परिवर्तनों के लिए पूँजीपति, सूचना प्रौद्योगिकी, सूचना विस्फोट को भी अपने साथ लिए है। यह कहा जाए इन सबकी ताकत से मीडिया ने नए समाज को गढ़ना शुरू कर दिया है।

समाज एक ऐसा रंगमंच है जिस पर विविधताओं से भरे जीवन को उसके बहुरंगी, कलेवर में आसानी से देखा, समझा और अनुभूत किया जा सकता है। आज के समय में मीडिया सर्वव्यापी ईश्वर की जगह होता रहा है। आधुनिक समाज, मानव और कोई भी व्यवस्था ऐसी नहीं हैं जो इसके प्रभाव से वंचित हो। इसमें भी कोई दो राय नहीं कि इसकी भूमिका सेतु की है जो समर्थतम से निर्बलतम और शीर्ष से फर्श के बीच एक मजबूत संप्रेषण चैनल है। जहाँ मीडिया एक ओर राज–व्यवस्था की चीर–फाड़ करता है, वहीं वह राज समाज को असंख्य नजरों के कटघरे में खड़ा रखता है। इस रूप में यह किसी अन्य व्यवस्था की तरह उसका एकायामी की जगह बहुआयामी होना भी है क्योंकि प्रत्येक व्यवस्था का अपना चरित्र, कर्म और लक्ष्यबिन्दु होते हैं, पर मीडिया के लिए यह सीमांकन है ही नहीं। शायद यही कारण है कि इसे लोकतंत्र का चौथा स्तंभ भी कहकर पुकारा गया है।

विषय के अंतरतम में प्रविष्ट होने से पूर्व कुछ सहज विज्ञासाओं का उदय होता है, कि क्या जितना महत्व इस समय व समजा में मीडिया को दिया जा रहा है वह पूर्णतः न्यायसंगत है अगर यह इतना महत्वपूर्ण है तो इसके चरित्र की बुनावट कैसी है ? इसका विचार दर्शन विधायक (सकारात्मक) है या निषेधात्मक (-) क्या इसकी कोई निर्णायक भूमिका भी है ? क्या यह हमारे समय और समाज को ठीक–ठाक ढंग से देख–विवेच रहा है? कहीं इसकी भूमिका समय के नेतृत्व की तो नहीं है ? अपने व्यावहारिक चरित्र में यह कहीं कुलीनवर्ग का प्रतिनिधि बनकर तो नहीं रह गया ? क्या बदले समय और समाज की चुनौतियों का सामना करने में यह पर्याप्त सक्षम है।

यह तो हम जानते ही हैं कि अपने अतीत में मीडिया एकआयामी ही था यानी केवल मुद्रण माध्यम। जाहिर है तब इसकी संचारशीलता और गतिशीलता भी आज की–सी नहीं रही थी। लेकिन आज इसके चरित्र में एकायामिता का स्थान बहुआयामिता ने ले लिया है। आज इसके तीन आयाम या रूप कहें तो मोटे तौर हमारे सामने हैं – 1. प्रिंट, 2. इलेक्ट्रोनिक, 3. सायबर। आज यह एक सीमित प्रभावी एवं संचारशील माध्यम नहीं रहा। सैटेलाइट की वजह से अब हम पल–पल बदलते विश्व की प्रत्येक घटना के साक्षी होते जा रहे हैं। यह कहना ठीक होगा कि अब हम विश्वगांव की परिकल्पना के दौर में नहीं वरन् उसका साकार हिस्सा होकर जीवन की यात्रा में हैं।

आज के मीडिया के चरित्र में उपभोक्तावादी दर्शन का स्थान अहम हो गया है। अपनी इस प्रवृत्ति के कारण पहले वह एक कृत्रिम माँग पैदा करता है फिर उसकी पूर्ति के लिए लक्ष्य निर्धारित करता है जब ग्राहक को आदत हो जाती है, तो वह अपने मुनाफे की राह पर ग्राहक सुविधा बहाल रखता है।

यानी मीडिया जागरूकता, सजगता और संवेदनशीलता के स्थान पर हीन मनोवृत्ति के विकास की राह पर चला जा रहा है। उसका ध्यान समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति की तरफ न जाकर अपने नियोजकों–प्रयोजकों, विज्ञापनदाताओं, समाज के प्रभुवर्ग की रूचि की सीमा में ही अटक कर रह जाता है। यह अटकरन ही उसे भटकरन की ओर ले जा रही है।

संचार का कोई भी माध्यम एकांगी नहीं होता। वह एक दुधारी तलवार की तरह होता है। यह बात लक्षित किए जाने योग्य है कि मीडिया ने समाज को सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही तरह से प्रभावित किया है। इसमें कोई दो राय नहीं कि मीडिया ने व्यक्ति की कल्पनाशीलता और जिज्ञासा के साथ विवेचनात्मक क्षमता को बढ़ावा दिया है। फलस्वरूप व्यक्ति की गतिशीलता, जागरूकता और सजगता बढ़ी है। साथ ही व्यक्ति, राज्य और समाज के बीच संवाद के नए अवसर पैदा हुए हैं। जीवन की गरिमा व गुणवत्ता के प्रति व्यक्ति चेतना का विकास हुआ और उसके प्रति सम्मान में वृद्धि हुई है। आर्थिक क्षेत्र में बढ़ी चेतना के कारण अब व्यक्ति उपभोक्तावादी आन्दोलनों का महत्व समझने लगा है। राजनीतिक चेतना से सम्पन्न पक्ष–विपक्ष को अपनी बात रखने की जगह मिलने लगी है।

वहीं दूसरी ओर मीडिया रूपी इस दुधारी तलवार की नकारात्मक धार ने व्यक्ति में घोर व्यक्तिवादी भाव को पोषित किया है। हमारे समय में विखण्डन के इस दौर और तेजी का श्रेय भी इसी को है। व्यक्तिगत अहं का विस्तार हुआ है, स्वार्थपरायणता बढ़ी है। इतना ही नहीं मीडिया ने अपने मुनाफे के चक्कर में अपराध एवं अंध–विश्वास को भी बढ़ावा दिया गया है। चमत्कार के प्रति जनमानस में आकर्षण बढ़ा है। तथ्यों, घटनाओं के सरलीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है। नए मिथ गढ़े गए हैं और पौराणिक पात्रों को सेलेबल फॉर्म में बेचने योग्य प्रवृत्ति का विकास हुआ है। सब कुछ कारर्पोट कल्चर में बदलता जा रहा है।

मीडिया के चरित्र में आई यह तेजी विशिष्ट परिवर्तनों के लिए पूँजीपति, सूचना प्रौद्योगिकी, सूचना विस्फोट को भी अपने साथ लिए है। यह कहा जाए इन सबकी ताकत से मीडिया ने नए समाज को गढ़ना शुरू कर दिया है।

आज तो मीडिया की रोमांचकारी भूमिका है क्या वह बिना पूँजी, सूचना प्रौद्योगिकी के संभव थी ? आज अखबारों के बहुराष्ट्रीय संस्करण तक निकल रहे हैं। एशियन एज, हैराल्ड ट्रिब्यून जैसे अखबार एक साथ कई देशों से निकल रहे हैं। इसका एक फायदा यह भी हुआ कि अब अखबार गाँव, कस्बों तक भी जा पहुँचा है। इससे जनभागीदारी भी बढ़ी है। इलेक्ट्रोनिक मीडिया ने दुष्प्रभावों को प्रभावी बनाने में महत्ती भूमिका अदा की है। स्टिंग ऑपरेशन का विचलनकरी दुरूप्योग, ब्लैकमेलिंग का एक और जरीया बन कर उभरा है। इसी क्रम में चैनलों ने हमारे आँगन की थाली में पवित्रता व मनोरंजन के स्थान पर अपराध, सेक्स, हिंसा जैसी अपच सामग्री अन्धाधुंध परोसनी प्रारंभ कर दी है।

यानी इस मीडिया से जो भारतबोध हमें मिलता है वह कुण्ठित भारतबोध है। क्योंकि इसमें सर्वत्र न गरीबी है न भूखमरी न बेरोजगार न अकाल बल्कि भव्य–भवन, अट्टालिकाए, विवाहेत्तर संबंध, तलाक, टूटते–बिखरते परिवार की त्रासदी की चाशनी के सिवा कुछ भी तो नहीं है। यानी इसके हिसाब से तो समाज में मूल्यहीनता, हताशा, पराजय के सिवा कहीं कुछ भी नहीं है।

मीडिया के चरित्र में कुलीनता या अभिजातवर्गीयता का प्रवेश बड़ी चिंता का विषय है। मीडिया चन्द बड़े घरानों की संपत्ति भर है। जबकि इसका विस्तार गाँव–गाँव गली–गली है। हालांकि इसके नकारात्मक पक्ष का प्रचार–प्रसार तेजी से समाज में व्याप रहा है, पर फिर भी सकारात्मकता की ऊर्जा अभी पर्याप्त शेष है।

ऐसे में हमें आवश्यकता इस बात की है कि हम मीडिया की हस्तक्षेपधर्मी भूमिका को गति एवं सही दिशा में प्रक्षेपित करें। इसके विपन्न, उत्पीड़न एवं असहाय और वंचित वर्ग की आवाज बनाकर उन्हें मुख्यधारा में लाने वाले माध्यम की प्रभावी भूमिका निभाने दें।

ऐसे में नागरिक पत्रकारिता एक ऐसा साधन है कि जिसके जरिये लोकतान्त्रिक व्यवस्था की मजबूती और संवेदनशीलता की रक्षा की जा सकती है। हालांकि प्रामणिकता और अप्रमाणिकता का मुद्दा इस संबंध में विमर्श का विषय हो सकता है, पर लोकोपयोगिता एवं प्रभावशीलता के साथ मूल्यहीनता से बचने की एक प्रभावी राह यह जरूर है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम मीडिया को प्रोफेन्शनिलिजम से बाहार लाते हुए उसका मिशनवादी प्रोफेशनल चरित्र गढ़ने के सार्थक प्रयास करें।

आने वाला समय हिंसक व विध्वंसक उपभोक्तावाद का है। वर्चस्वादी शक्तियाँ अधिक आक्रामकता से अपने प्रभाव का परिष्कार करने को आतुर हैं। वे माडिया का मनमाना उपयोग करेंगे। अतः हम सबका यह दायित्व बनता है कि समय रहते हम जागरूक व सजग होकर मीडिया को पथविमुख, पथच्युत होने से बचाएँ, तो आने वाला समय, समाज, मानवता के लिए शुभ संकेत लेकर आएगा और यह तभी संभव होगा जब हम सब मिलकर इस राह को मजदूर की भाँति बनाने को एकजुट होकर प्रयास करेंगे।

यह कहानी नहीं

मंगत बादल
राजस्थानी साहित्यकार
रायसिंहनगर, राजस्थान

नर की मादा के प्रति इस क्रूरता ने जैसे मेरे बालमन को भी कुचल दिया था। मेरे मन में अनेकानेक प्रश्न उठ रहे थे लेकिन अन्तिम परिणति अभी शेष थी।

विश्व प्रसिद्ध! बेजोड़! उस्ता चित्रकला! मैं आर्ट गैलरी में खड़ी ऊँट की खाल पर सोने के पानी और रंगों से बने चित्र देख रही थी जो दर्शक को बरबस अपनी ओर खींच लेते हैं। राधा और कृष्ण के चित्र,रास लीला के चित्र, बणी–ठणी, महेन्द्र–मूमल, ढोला–मारवाणी के चित्र। ऊँट की खाल पर ऊँट के ही चित्र! ढोला–मारवणी के चित्र में ऊँट की तनी हुई गरदन, उसका आगे वाला उठा हुआ पैर, मोहरी (ऊँट को चलाने के लिए नकेल में डाली गई रस्सी) के इशारे से उसे मोड़ने के प्रयास में ढोला का उठा हुआ हाथ तथा साथ ही कनखियों से मारवणी की ओर देखना, मारवणी की झुकी नजरें, मंद मुस्कान आदि देखकर ऐसा लग रहा था जैसे अभी इस चित्र में से निकलकर जमीन पर उतर आयेगा फिर पूगल के धोरों को पीछे छोड़ता हुआ नरवर की ओर बढ़ जाएगा। तस्वीर में ऊँट, उस पर सवार ढोला, मारवणी जैसे प्रेम को एक नया अर्थ दे रहे थे! मैं इस चित्र को देखते–देखते खो जाती हूँ अपने अतीत में! व्हां ढोला, मारवणी तो नहीं पर कुछ सवाल हैं जो ऊँट की तरह गुल्ला (जीभ को मुँह से बाहर निकालकर उसे फुलाकर बलबलाना) मदांध होकर मांकड़े (मदांध ऊँट पिछली टाँगे चौड़ी कर अपनी पूंछ जोर–जोर से टाँगों के बीच मारता है) मार रहे हैं। जीवन के इतने वर्ष बिता देने के बाद भी मेरे पास इन सवालों के जवाब नहीं हैं। हालांकि ऐसे प्रश्न सभी के जीवन में आते होंगे लेकिन हो सकता है कोई उन्हें दरकिनार करदे या ऐसे वाहियात विषयों के बारे में सोचने की जरूरत ही न समझे। आज मैं एक कुशल सर्जन हूँ। यह सब पेशे से जुड़ा है लेकिन यदि मुझे जान–बूझकर किसी की जान लेनी पड़े या किसी असाध्य रोगी के प्राण लेने में ही उसका भला हो और उसे मारने के लिए कहा जाये तो मैं ऐसा नहीं कर सकूंगी। हजारों व्यक्तियों को मैंने मौत से संघर्ष करते देखा है। कुछ ऐसे रोगियों की अनुनय प्रार्थनाएँ भी सुनी हैं जो शारीरिक कष्ट से दुःखी होकर मर जाना चाहते हैं किन्तु मैं ऐसा कभी सोच भी नहीं सकती क्योंकि जीवन देने वाला ईश्वर हैं। जब हम जीवन देने में सक्षम नहीं हैं तो मृत्यु कैसे दे सकते हैं ?

मैंने शुरू में अपने प्रश्नों की उपमा ऊँट से दी है आप सोच भी रहे होंगे कि साहित्य में क्या उपमाओं का अकाल पड़ गया है अथवा ऐसे हठी किन्तु मार्मिक प्रश्नों के लिए ऊँट से अच्छी उपमा दूसरी हो ही नहीं सकती ? हो सकती होगी लेकिन मेरा प्रश्न ऊँट से ही जुड़ा है इसलिए मैं दूसरी उपमा दे भी कैसे सकती हूँ। राजस्थान में एक कहावत है कि 'हलस्मेतिए' (वर्षा के बाद प्रथम बुवाई) के अवसर पर यदि किसान के ऊँट की मौत हो जाती है तो किसान भी एक तरह से मर जाता है। आज जब कृषि यंत्र आधारित हैं तो आप को यह कहावत झूठी या हास्यास्पद लग सकती है लेकिन यह बात कुछ दशकों पहले की है जब हमारी कृषि का आधार पशु ही थे।

मैं सात या आठ वर्षों की रही होऊँगी। उस दिन जब सुबह–सुबह नींद से जागी तो देखा घर में एक उत्सव का सा माहौल था। माँ टोकनी में मीठा दलिया बना रही थी। पास ही गर्म पानी की एक बाल्टी भरी पड़ी थी। माँ टोकनी में कड़छी चला रही थी तभी बाहर से दादाजी ने आवाज दी, 'बहू! गर्म पानी ला दो। माँ जब बाल्टी उठाकर बाड़े की ओर चली तो मैं भी उसके पीछे–पीछे चल पड़ी।

हमारे घर के उत्तर की ओर बाड़ा था। दीवार के बीच में दरवाजा रख लिया गया था। पशुओं को घर के ही मुख्य द्वार से होकर बाहर–भीतर ले जाया जा सकता था। मैंने देखा बाड़े में भाखलों (ऊँट की ऊन और पुरानी रूई से

बने खेसनुमा वस्त्र) की एक कनात तनी हुई है। उसी की ओट में हमारी ऊँटनी खड़ी हुई है। उसके पास एक प्यारा सा 'टोडिया' (ऊँटनी का छौना) खड़ा था। वह अपने डगमगाते पैरों से ऊँटनी की ओर बढ़ने का प्रयास कर रहा था। शिथिल–सी ऊँटनी उसे सूंघ रही थी। गाँव के दो–एक लोग तथा मेरे पिताजी भी वहाँ बैठे थे। पास में अलाव जल रहा था। ''हमारी सांड (ऊँटनी) ब्या गई! दरअसल ऊँटनी के जापे का विशेष ध्यान रखा जाता है। उसे 'अलाय–बलाय' से बचाने के लिए अलग स्थान पर कनातें तानकर 'प्रसुति–कक्ष' बनाया जाता है जहाँ हर एक को तो जाने ताक की इजाजत नहीं होती। दादाजी ने गर्म पानी में एक कपड़ा भिगोकर उससे नवजात टोडिए का शरीर पोंछा। दादाजी ने बताया कि वह टोडिया (नर ऊँट) ही है और उसका मुँह पकड़कर ऊँटनी के थनों से लगा दिया। मैं भी अपने बाल सुलभ कौतुक को शान्त करने के लिए ऊँटनी के पास चली गई और उस नरम–मुलायम छौने के शरीर पर बार–बार हाथ फिराने लगी। वह मुझे बहुत ही मासूम, कोमल और प्यारा लग रहा था। ऊँटनी उसे दूध पिला रही थी तथा तृप्ति से कभी–कभी गर्दन मोड़कर उसकी ओर निहार भी लेती थी। आँखे बन्द कर वह अब जुगाली कर रही थी। प्रसव की पीड़ा से मुक्ति के बाद अब जैस सृजन का आनन्द उसे भाव–विभोर कर रहा था। थोड़ी देर बाद माँ जब दलिया लेकर आ गई तो दादा ने उसे बट्ठल (तसले) में डाल दिया और उसमें घी उड़ेल दिया फिर ठंडा होने के लिए एक तरफ सरका दिया। ऊँटनी उसकी गंभ से मचलकर उधर लपकने लगी तो दादाजी ने डाँटते हुए कहा, ''रुक!अभी रुक! गर्म है! ठंडा तो हो जाने दे!'' ऊँटनी जैसे उनकी भाषा समझ गई और पुन जुगाली करने लगी। मैं तो बार–बार छौने पर हाथ फिरा रही थी। मेरा बाल–सुलभ मन उसे गोद में उठाने को मचल रहा था। बीच–बीच में ऊँटनी कभी अपने छौने को तो कभी मेरा सिर सूंघ लेती। पशु अपनी घ्राण शक्ति के माध्यम से भावों को समझ लेते हैं।

अब मुझे एक नया काम मिल गया था। रोज स्कूल से आते ही ऊँटनी को गुड़ की एक पेड़ी खिलाती फिर टोडिए के साथ खेलने लगती। वह भी मेरे पीछे–पीछे रहता। घुमाने के लिए खेत ले जाते तो वह भी पीछे–पीछे चलता। कभी ऊल–जुलूल तरीके से कूदता! कभी जोर से बोलता और कभी अपनी थूथन या गरदन ऊँटनी से रगड़ता। मैं ऊँटनी पर बैठे–बैठे ही उसकी क्रीड़ाएँ देखती। उसकी उन बाल सुलभ क्रीड़ाओं से मुझे रस मिलता। सच है, बचपन चाहे किसी का भी हो मस्त, आनन्ददायी और क्रीड़ामय होता है।

अभी होली नहीं आई थी। गाँव में सारी–सारी रात चंग बजते। वह फरवरी का महीना ही रहा होगा। रविवार या कोई छुट्टी का दिन था। दादाजी और मैं खेत की ओर जा रहे थे। मैं ऊँटनी पर बैठी थी। दादाजी उसकी मोहरी पकड़े–पकड़े आगे चल रहे थे। काफी ठंड थी। मैंने चादर की कसकर बुक्कल मारी हुई थी। टोडिया कभी हमारे साथ चलने लगता तो कभी दौड़कर तापड़िये (चारों टांगों से एक साथ उछलते हुए जब ऊँट चलता है उसे 'तापड़ना' कहते हैं) करता हुआ आगे निकल जाता। फिर लौटकर हमारे पास आ जाता। वह कभी किसी झाड़ी को सूंघता, कभी किसी पौधे पर मुँह मारता, इस प्रकार वह वनस्पति जगत से अपनी पहचान बना रहा था। उसके करतब देख–देखकर मैं खुश हो रही थी।

खेत में पहुँचकर दादाजी ने ऊँटनी को एक खेजड़ी के ठूंठ से बांध दिया और हरे चने उखाड़ कर उसके आगे डाल दिए। मुझे वहीं रूकने का कहकर वे खुद एक–दो खेत दूर पड़ौस के खेत में चिलम पीने या गपशप करने चले गए। मैं इधर–उधर कूदती–फांदती फिर रही थी। टोडिया भी कभी मेरे पीछे–पीछे कभी ऊँटनी के पास चला जाता। मैं खेत में खड़ी विभिन्न वनस्पतियों के फूल तोड़–तोड़कर उनका गुच्छा बनाने लगी। तभी मुझे एक ऊँट का बलबलाना सुनाई दिया। मैं उसी ओर देखने लगी।

ऊँट, बेतहाशा हमारे खेत की ओर ही दौड़ा चला आ रहा था। उसका मुँह झागों से भरा हुआ था! गुल्ला निकाल कर उसका जोर से बलबलाना, पैर पटकना, मांकड़े मारना आदि मन में दहशत उत्पन्न कर रहा था! मैं नहीं जानती थी कि वह हमारे खेत की तरफ ही क्यों आ रहा है ? मैं भयवश उसकी ओर टकटकी बाँधे देख रही थी। यह भी

भूल गई कि दौड़कर अपने दादाजी के पास चली जाऊँ या उन्हें आवाज ही दे दूँ। ऊँट को अपनी ओर आते देख ऊँटनी भी भय से अरड़ाने (अर्राने) लगी और मोहरी तुड़वाने की चेष्टा करने लगी। टोडिया भयभीत होकर ऊँटनी के पास आ गया और उसके चारों ओर चक्कर काटने लगा। इतने में वह मदांध ऊँट पास आ पहुँचा। वह बेहद आक्रामक हो रहा था। ऊँटनी के पास आते ही उसे लगा कि टोडिया उसके और ऊँटनी के बीच दीवार है इसलिए पहले इस दीवार को हटाना चाहिए। उसने 'डांचली' (उचक कर मुँह से पकड़ना) मारकर टोडिए की गरदन पकड़ी और जोर से झटका दिया। टोडिया जमीन पर गिर पड़ा तो वह उसके ऊपर बैठ गया और उसे कुचलने लगा। तभी ऊँटनी ने गरदन को जोर से झटका दिया जिससे नकेल टूट गई। स्वतन्त्र होकर वह उस क्रूर ऊँट पर टूट पड़ी लेकिन अब तक उसी आँखों की किरकिरी दूर हो चुकी थी। मैं डर से जोर–जोर से पैर पटकती हुई चिल्लाने लगी लेकिन इससे ऊँट को क्या फर्क पड़ता!

ऊँटनी उसका अधिक देर तक सामना न कर सकी इसलिए वह दौड़ने लगी। ऊँट उसके पीछे–पीछे दौड़ रहा था। वह उसे काबू करने के लिए कभी उसकी पीठ पर काटता तो कभी गरदन पर। कभी उसको धक्का देकर गिराने की कोशिश करता। ऊँटनी ने उससे बचने के लिए झिरकी (दौड़ते–दौड़ते एकदम नब्बे अंश पर मुड़ना) खाई किन्तु सन्तुलन न रख सकी और गिर पड़ी। जोर से 'कड़ाक' का शब्द हुआ। ऊँट उसके ऊपर बैठ गया और घुटनों से उसे कुचलने लगा। ऊँटनी दर्द एवं बेबसी में अरड़ाए जा रही थी।

शोर सुनकर दादाजी और दो अन्य खेत पड़ौसी लाठियाँ ले–लेकर आ गए थे और ऊँट पर पिल पड़े। बड़ी मुश्किल से उसे काबू में किया गया किन्तु जब दादाजी ने ऊँटनी को देखा तो अफसोस से माथा पकड़ कर बैठ गए। अचानक गिरने से ऊँटनी की आगे वाली दोनों टाँगे टूट गई थीं। वह दर्द से बिलबिला रही थी। उधर टोडिया भी ठंडा पड़ चुका था। मैं तो बस रोए जा रही थी। मैंने गुस्से में भरकर बंधे हुए ऊँट को लातें मारीं। दादा ने मुझे पुचकार कर बाँहों में भर लिया। आँसू पोंछे। क्रोध और बेबसी में ऊँट अब भी बलबला रहा था। उसकी आँखों से जैसे चिनगारियाँ बरस रही थी।

नर की मादा के प्रति इस क्रूरता ने जैसे मेरे बालमन को भी कुचल दिया था। मेरे मन में अनेकानेक प्रश्न उठ रहे थे लेकिन अन्तिम परिणति अभी शेष थी।

मेरे दादाजी और मैं लुटे हुए व्यापारियों की तरह घर लौटे। हालांकि मेरे दादाजी यह बात भली–भाँति जानते थे कि ऊँट की टूटी हड्डी कभी जुड़ती नहीं इसके बावजूद वे गाँव के ही एक सयाने को जो पशुओं की दवा–दारू करता था, अपने साथ लेकर खेत में गए। मैं भी साथ गई थी। ऊँटनी रह–रहकर बिलबिला रही थी। उसकी आँखों के नीचे का हिस्सा भीगकर काला हो गया था, जैसे पीड़ा और दुःख के कारण वह रो रही थी। मुझे भी उसे देखकर रोना आ गया था। सयाने ने लम्बी सिसकारी भरी और घर लौट आए।

इसके आगे की कहानी लम्बी नहीं है। घर का कोई न कोई सदस्य रोज–रोज खेत तो जाता ही था। वह कुछ सूखा या हरा चारा ऊँटनी के आगे डाल आता। उसे पानी पिला देता। वह धीरे–धीरे सूख रही थी। दादाजी आजकल अकसर उदास रहते थे। न जाने वे किस उधेड़बुन में खोए रहते। वे जब भी खेत से लौटते अधिक दुःखी और बेचैन दिखलाई पड़ते। एक दिन उन्होंने बलराम चाचा को बुलाया। वे रिश्ते में मेरे चाचा लगते थे। उनके पास बन्दूक थी। वे उन्हें साथ लेकर खेत की ओर चल पड़े। मैं भी उनके साथ जाने की जिद्द करने लगी। दादाजी ने पहले तो मुझे झिड़क दिया फिर न जाने क्या सोचकर मुझे साथ ले लिया। शायद उस क्रूर किन्तु संवेदना पूर्ण घटना का प्रत्यक्षदर्शी बनाने के लिए या ऊँटनी के प्रति मेरे मन में पनपे मोह को सदा–सदा के लिए खत्म करने के लिए या फिर यह समझाने के लिए कि कई बार मौत जीवन से अधिक करूणा पूर्ण लेकिन सुखद होती है।

राजभाषा संबंधी गतिविधियां

हिन्दी पखवाड़ा–2015

प्रतिवर्ष की भांति 14 सितम्बर–हिन्दी दिवस मनाए जाने के संबंध में राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक दिनांक 08.09.2015 में लिए गए निर्णयों की अनुपालना में भाअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में दिनांक 14–28 सितम्बर, 15 तक हिन्दी पखवाड़ा मनोरम वातावरण में मनाया गया। राजभाषा के प्रगामी प्रयोग हेतु इस दौरान राजभाषा संबंधी विभिन्न गतिविधियां व कार्यक्रम आयोजित किए गए जिनमें केन्द्र वैज्ञानिकों अधिकारियों/कर्मचारियों तथा बीकानेर स्थित भाअनुप के संस्थानों/केन्द्रों, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर के सदस्य कार्यालयों ने इसमें अपनी भागीदारिता निभाई तथा इसे सफल बनाया।

हिन्दी पखवाड़ा : उद्घाटन कार्यक्रम –14.09.2015

केन्द निदेशक डॉ. एन.वी.पाटिल ने हिन्दी पखवाड़े के शुभारम्भ की विधिवत् घोषणा की। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि हिन्दी दिवस एक चेतना का प्रतीक है जो हमें यह याद दिलाता है कि इस भाषा का देश को एकसूत्र में पिरोना में कितना महत्वपूर्ण योगदान है। डॉ. पाटिल ने कहा कि इस अवसर को एक परिपाटी के रूप में नहीं लेते हुए वास्तविक धरातल पर इसे पूरी इच्छाशक्ति से अपनाया जाना चाहिए तभी यह भाषा अपना प्रवाह निरंतर बनाए रख सकेगी और ऐसे आयोजनों की सार्थकता सिद्ध होंगी। उन्होंने विश्व हिन्दी सम्मेलनों का जिक्र करते हुए कहा कि हमें हिन्दी की महत्ता सिद्ध करने हेतु किसी अन्य देशों पर निर्भर नहीं रहना बल्कि मानसिकता में बदलाव लाकर इसे परिणित करना होगा। उन्होंने वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों को हिन्दी दिवस की बधाई संप्रेषित करते हुए इसे गौरव के रूप में लेते हुए नूतन ऊँचाइयों पर ले जाने हेतु प्रोत्साहित किया।

इस अवसर पर प्रभारी राजभाषा डॉ. अशोक कुमार नागपाल ने हिन्दी दिवस मनाए जाने की परंपरा के बारे में बताया तथा भाअनुप, नई दिल्ली के माननीय महानिदेशक डॉ.एस. अय्यप्पन द्वारा हिन्दी दिवस के अवसर पर जारी अपील को पढ़कर सुनाया। इस दौरान परिषद से श्रीमान राधा मोहन सिंह, माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार द्वारा हिन्दी चेतना मास, 2015 पर प्राप्त संदेश को केन्द्र के प्रमुख स्थलों पर चस्पां करवाया गया। डॉ. नागपाल ने पूरे पखवाड़े (14–28 सितम्बर,2015) की गतिविधियों के बारे में भी जानकारी दी तथा इनमें सभी की अधिकाधिक भागीदारिता हेतु अनुरोध किया गया।

हिन्दी में शुद्ध लेखन प्रतियोगिता

उद्घाटन सत्र के पश्चात् ही हिन्दी में शुद्ध लेखन प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमें कुल 33 प्रतिभागियों ने इस प्रतियोगिता में भाग लिया। केन्द्र निदेशक डॉ. पाटिल द्वारा शुद्ध लेखन प्रतियोगिता के प्रतियोगियों का उत्साहवर्धन किया गया। हिन्दी में शुद्ध लेखन प्रतियोगिता में प्रथम श्री हरपाल सिंह कौंडल, द्वितीय डॉ. बलदेव दास किराडू तथा तृतीय डॉ. शिरीष नारनवरे रहे। इस दौरान स्वच्छ भारत अभियान के तहत केन्द्र के डेयरी व औषधालय क्षेत्र के आस–पास के परिसर को स्वच्छ बनाया गया।

हिन्दी में टंकण प्रतियोगिता

वैज्ञानिकों/अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी टंकण हेतु प्रोत्साहित करने के प्रयोजनार्थ हिन्दी में टंकण प्रतियोगिता का आयोजन रखा गया जिसमें प्रतिभागियों ने उत्साहपूर्वक इसमें भाग लिया। इसमें वैज्ञानिक वर्ग में प्रथम डॉ. शिरीष नारनवरे, द्वितीय डॉ. राकेश रंजन, तकनीकी वर्ग में प्रथम श्री दिनेश मुंजाल, द्वितीय डॉ. राकेश कुमार पूनियाँ

तथा प्रशासनिक वर्ग में श्री विष्णु कुमार सोनी प्रथम व श्री हरपाल सिंह कौंडल द्वितीय स्थान पर रहे।

हिन्दी में तकनीकी/वैज्ञानिक पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता

हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत दिनांक 24.09.2015 को हिन्दी में तकनीकी/वैज्ञानिक पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें वैज्ञानिकों ने आमजन में हिन्दी भाषा के माध्यम से जानकारी संप्रेषण हेतु पोस्टरों का प्रदर्शन किया। इसमें मूल्यांकन समिति के रूप में डॉ. बी.डी. शर्मा, डॉ. आर.ए. लेघा व श्री अनिल कुमार शर्मा ने प्रतिभागियों के पोस्टरों का मूल्यांकन किया। भाअनुप के बीकानेर स्थित संस्थानों ने भी इन सभी गतिविधियों में भागीदारी निभाई। हिन्दी में वैज्ञानिक/तकनीकी पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता में डॉ. फतेह चन्द टुटेजा, रा.उ.अनु.केन्द्र,बीकानेर ने प्रथम, डॉ. हरे कृष्ण, वरिष्ठ वैज्ञानिक, के.शु.बा.संस्थान, बीकानेर ने द्वितीय व डॉ. निर्मला सैनी, के.भे.ऊ.अनु.,बीकानेर ने तृतीय स्थान अर्जित किया।

राजभाषा कार्यशाला

इस कार्यक्रम के पश्चात् राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें राजकीय इंजीनियरिंग कॉलेज, बीकानेर के डॉ. गौरव बिस्सा ने 'व्यक्तित्व एवं नेतृत्व क्षमता का विकास' व्याख्यान में अलग–अलग व्यक्तित्व की परिभाषा दीं। उन्होंने कहा कि अपने कार्यक्षेत्र के काम को एक मिशन/अभियान की तरह देखें उसे क्रियान्वित करें। बिना क्रियान्विति के सारा ज्ञान व्यर्थ होता है। उन्होंने कहा कि हम अपनी समस्या का स्वयं समाधान ढूंढे न कि निर्भर रहें।

हास्य कवि सम्मेलन

सायंकालीन आयोजित हास्य कवि सम्मेलन में हास्य कवि के रूप में वरिष्ठ साहित्यकार श्री भवानीशंकर व्यास 'विनोद' ने अपनी रचनाओं के माध्यम से श्रोताओं काखूब गुदगुदाया। उन्होंने कम्प्यूटर, भोजनभट्ट, टेस्ट टयुब बैबी, तोंद को नमस्कार आदि रचनाएं सुनाई इसी अवसर पर अन्य हास्य कवि श्री विजय कुमार धमीजा ने 'मेरे सरकार' 'घर कभी भी आ सकते हों आदि रचनाएं सुनाते हुए श्रोताओं से तालियां बटोरी। इस अवसर पर केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने कहा कि यह संयोग ही है कि आज पोस्टर प्रदर्शन प्रतियोगिता के माध्यम से कुछ गहन, राजभाषा कार्यशाला के माध्यम से कुछ मौलिक तथा हास्य सम्मेलन में कुछ तनाव हल्का हुआ हैं। उन्होंने कहा कि प्रबन्धन का गुण आने पर व्यक्ति बुलंदियों को छू सकता है, रोजमर्रा की कार्यपद्धति में हमें भष्ट्राचार, जीवन कैसे जिएं, पारस्परिक संबंध कैसे हों, देश के प्रति हमारा क्या दायित्व है, धर्म का सही रूप क्या होना चाहिए आदि तमाम प्रष्नों से रूबरू होना पड़ता है। ऐसे रचनात्मक मंच इनका निराकरण प्रस्तुत करने में सक्षम है। प्रभारी डॉ. अशोक नागपाल ने कार्यशाला के उद्देश्यों व हास्य कविता पाठ पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम का संचालन श्री हरपाल सिंह कौण्डल ने किया।

हिन्दी में निबन्ध लेखन प्रतियोगिता

साहित्यिक अभिरूचि व लेखन को बढ़ावा देने हेतु हिन्दी में निबन्ध लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिता में श्री हरपाल सिंह कौंडल, श्री सुमेर सिंह तथा डॉ. काशीनाथ क्रमशः प्रथम,द्वितीय व तृतीय स्थान पर रहे।

हिन्दी में श्लोगन/नारा/प्रचार वाक्य प्रतियोगिता

पखवाड़े के दौरान ही आयोजित हिन्दी में श्लोगन/नारा/प्रचार वाक्य प्रतियोगिता में श्री रामदयाल रैगर ने प्रथम, डॉ. राकेश रंजन ने द्वितीय तथा श्री जितेन्द्र कुमार ने तृतीय स्थान प्राप्त किया।

हिन्दी पखवाड़े : पुरस्कार वितरण व समापन समारोह

दिनांक 28.09.2015 को आयोजित हिन्दी पखवाड़े के पुरस्कार वितरण व समापन समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित डा.बी.एन.त्रिपाठी, निदेशक, केन्द्रीय अश्व

हिन्दी पखवाड़ा 2015 : दृश्य स्वरूप में

अनुसंधान केन्द्र, हिसार ने अपने अभिभाषण में कहा कि मातृभाषा हिन्दी में मनोभाव सहज रूप प्रकट कर सकते हैं, यह स्थिति किसी अन्य भाषा के प्रयोग में उत्पन्न नहीं हो सकती। देश की एकसूत्रता में भाषा व संसति का महत्ती योगदान है। डॉ. त्रिपाठी ने कहा कि यद्यपि हिन्दी का उत्तरोत्तर विकास हो रहा है परंतु अभी भी इस ओर सुधार की आवश्यकता है, इसके लिए हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग होना चाहिए और ज्यों ज्यों इसका प्रयोग बढ़ेगा त्यों त्यों यह रूचिकर लगने लगेगी।

पुरस्कार वितरण व समापन समारोह के अध्यक्ष व केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी.पाटिल ने हिन्दी पखवाड़े के सफल आयोजन हेतु सभी कार्मिकों को बधाई देते हुए कहा कि अब वह समय आ गया है जब हमें हिन्दी दिवस को केवल परंपरा के रूप में न लेते हुए इसे सार्थक स्वरूप प्रदान करें, सुदृढ़ इच्छाशक्ति दिखाएं और इसका प्रयोग करने पर गौरवान्वित महसूस करें। डॉ. पाटिल ने कहा कि हम भारतीय हैं तो मातृभाषा में भी यह परिलक्षित होना चाहिए। उन्होंने कार्यालय स्तर पर भी हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करने पर जोर दिया ताकि जरूरतमंद ऊँट पालकों/किसानों को इसके माध्यम से लाभान्वित करवाया जा सके। डॉ. पाटिल ने हिन्दी भाषा के उत्तरोत्तर प्रयोग हेतु इसकी शैक्षणिक अनिवार्यता पर भी प्रकाश डाला।

इस अवसर पर प्रभारी राजभाषा डॉ. नागपाल ने केन्द्र में राजभाषा कार्यान्वयन स्थिति एवं हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत आयोजित गतिविधियों के बारे में जानकारी दी। मुख्य अतिथि महोदय डॉ. त्रिपाठी व केन्द्र निदेशक डॉ. पाटिल के कर कमलों से पखवाड़े के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कृत किया गया। पुरस्कार वितरण कार्यक्रम का संचालन श्री हरपाल सिंह कौण्डल ने किया। पखवाड़े संबंधी गतिविधियों के समाचारों को विभिन्न स्थानीय समाचार पत्रों द्वारा पर्याप्त स्थान दिया गया।

राजभाषा कार्यशाला : 23 दिसम्बर, 2015

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में दिनांक 23 दिसम्बर, 2015 को एक दिवसीय राजभाषा कार्यशाला का आयोजन रखा गया। इस कार्यशाला में अतिथि वक्ता के रूप में राजकीय (पी.बी.एम.) अस्पताल, बीकानेर में सह आचार्य एवं हृदय रोग विशेषज्ञ डॉ.संजय बेनीवाल ने 'पहला सुख निरोगी काया : हृदय (कार्डीओवेस्क्यूलर) संबंधी रोग एवं रोकथाम' विषयक व्याख्यान प्रस्तुत किया तथा साथ ही हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों के प्रयोग पर भी प्रकाश डाला गया।

सर्वप्रथम प्रभारी राजभाषा डॉ.अशोक नागपाल ने कहा कि भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल क्रियान्वयन हेतु केन्द्र में नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में एक कार्यशाला का आयोजन अपेक्षित है। ये राजभाषा कार्यशालाएं वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवम् कर्मचारियों को उनके दैनन्दिन कार्यो में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग हेतु प्रोत्साहित एवं सहायता प्रदान करने के साथ–साथ हिन्दी भाषा के प्रति उनकी सोच को परिष्कृत करने में सहायता प्रदान करती है।

कार्यशाला में ''पहला सुख निरोगी काया : हृदय (कार्डीओवेस्क्यूलर) संबंधी रोग एवं रोकथाम'' विषयक व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए डॉ.संजय बेनीवाल ने कहा कि हिन्दी भाषा में व्याख्यान देना सुखद है क्योंकि यह हमारी राजभाषा ही नहीं अपितु मातृभाषा भी है जिसके कारण हम अपनी बात सहज रूप से समझ–समझा पाते हैं। डॉ. बेनीवाल ने वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र जी मोदी का उदाहरण रखते हुए कहा कि जब वे संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी में अपनी बात रख सकते हैं तो हमें इसे प्रेरणा व गर्व के रूप में लेना चाहिए। उन्होंने जोर दिया कि भाषा को क्लिष्टता से बचाना चाहिए तथा आमजन में प्रयुक्त शब्दों का इस्तेमाल अधिक हों तो भाषा स्वतः प्रसार पाएगी।

अपने व्याख्यान विषय पर आते हुए डॉ.बेनीवाल ने कहा कि भारत वर्ष में आदिकाल से ही ऋषि–मुनियों ने स्वस्थ जीवन जीने का सूत्र 'संयमित जीवन' को माना तथा

यह सभी बीमारियों से बचाने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्धांत है। हृदय रोग पर बोलते हुए उन्होंने कहा कि यह मुख्यतः तीन कारणों से होना पाया गया है यथा–जन्मजात, संक्रामक, अव्यवस्थित जीवन शैली। उन्होंने इस भ्रामक बात को खारिज किया कि मदिरापान हृदय को मजबूत बनाता है। उन्होंने खाद्य पदार्थ के रूप में प्रयुक्त तेलों के संबंध में स्पष्ट किया कि रिफानरी ऑयल से प्राकृतिक रूप से प्राप्त ऑयल अधिक सुरक्षित व गुणकारी है। डॉ.बेनीवाल ने प्रतिभागियों को बताया कि रोजना 30 मिनिट का व्यायाम हृदय रोग को कम करता है। रक्तचाप, मधुमेह, हृदय आदि व्यायाम के रोगी हैं तो हल्का व्यायाम करें पर सप्ताह में 3 दिन जरूर करें। सामान्य व्यक्ति यदि चाहे तो सुबह–शाम भी कर सकते हैं, इससे रक्त में थक्के नहीं जमते। क्योंकि बचाव इलाज से कहीं ज्यादा प्रभावशाली है। डॉ.बेनीवाल ने आधुनिक समय में प्रचलित रोगों व उनके इलाज पर विस्तारपूर्वक जानकारी दी। उन्होंने मधुमेह पर बोलते हुए कहा कि वर्तमान में शुगर फ्री मिठाइयाँ चलन में हैं परंतु ये रासायनिक प्रक्रिया निर्मित होने के कारण सुरक्षित नहीं है, अतः वे इन्हें प्रयोग में न लें।

विचार–सत्र में सक्रिय प्रतिभागियों की स्वास्थ्य व उनसे संबंधित जिज्ञासाओं का निराकरण करते हुए डॉ. बेनीवाल ने सभी का उचित निराकरण प्रस्तुत करते हुए उन्हें संतुष्ट किया। इस पर कई प्रतिभागियों ने राजभाषा कार्यशाला के माध्यम से ऐसे व्याख्यानों की महत्ती आवश्यकता जताईं तथा मांग की कि आगामी कार्यशालाओं में भी 'सर्व जन हिताय–सर्व जन सुखाय' के विषयों को सम्मिलित किया जाए तो राजभाषा हिन्दी के प्रति उपयुक्त वातावरण का सृजन होने में मदद मिलेंगी।

अध्यक्ष महोदय डॉ.आर.के.सावल, प्रधान वैज्ञानिक ने केन्द्र निदेशक डॉ.पाटिल व राजभाषा इकाई की सराहना करते हुए कहा कि आयोज्य कार्यशाला में ज्वंलत मुद्दे को उठाया गया है जो कि निश्चित रूप से केन्द्र–कार्मिकों के लिए लाभदायक सिद्ध होगा। डॉ.सावल ने कहा कि इस भागदौड़ भरी जिन्दगी में हम स्वास्थ्य जैसे महत्वपूर्ण पहलू को अनदेखा कर देते हैं नतीजतन असमय ही हमें रोग घेर लेते हैं, यदि सही समय व सही जानकारी हो तो हम इनसे निजात पा सकते हैं।

कार्यशाला में श्री दिनेश मुंजाल, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी ने डॉ.संजय बेनीवाल के जीवन–वृत्त पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम का संचालन श्री नेमीचंद बारासा,वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी ने किया।

राजभाषा कार्यशाला : 22 मार्च, 2016

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में दिनांक 22 मार्च, 2016 को एक दिवसीय राजभाषा कार्यशाला का आयोजन रखा गया। इस कार्यशाला में अतिथि वक्ता के रूप में डॉ.गौरव बिस्सा, सह आचार्य, राजकीय अभियान्त्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर ने 'अभिप्रेरणा द्वारा प्रबंधकीय उत्कृष्टता' विषयक व्याख्यान प्रस्तुत किया गया।

सर्वप्रथम प्रभारी राजभाषा डॉ. अशोक नागपाल ने कार्यशाला के उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए हिन्दी भाषा की प्रगति एवं राजभाषा का इसमें योगदान पर अपनी बात कही।

अतिथि वक्ता डॉ.गौरव बिस्सा, सह–आचार्य, राजकीय अभियान्त्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर ने कार्यशाला में 'अभिप्रेरणा द्वारा प्रबंधकीय उत्कृष्टता' विषयक व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए कहा कि किसी भी कार्मिक में अपने संस्थान के प्रति अपनत्व का बोध सही रूप में एक सच्चे विश्वास का जागरण है। हमें अपने कार्यक्षेत्र/व्यवसाय पर गर्व होना चाहिए। उस संस्थान में काम करते हुए व्यक्ति के मन में महत्वपूर्ण व्यक्ति होने का बोध सच्ची अभिप्रेरणा जगाने वाला एक मुख्य स्रोत है। डॉ. बिस्सा ने कहा कि हमें केवल किसी समस्या पर बोलने के साथ–साथ उसे सुलझाना भी आना चाहिए। डॉ.बिस्सा ने नकारात्मकता के दुष्परिणामों से अवगत करवाते हुए कहा कि इससे घिरा व्यक्ति नैराश्य की सोच से ऊपर नहीं उठ सकता है। उन्होंने काम में अनावश्यक बाधा उत्पन्न करने वालों द्वारा कार्यप्रणाली के प्रभावित होने की प्रक्रिया को बड़े ही नाटकीय स्वरूप में से प्रस्तुत कर सकारात्मकता का महत्व समझाया। डॉ.बिस्सा ने समय–सीमा में काम करने, कार्यक्षेत्र के प्रति कर्त्तव्य बोध को सही मायने में जीवन समझने, गुणवत्ता पर ध्यान केन्द्रित करने, दायित्व का

हस्तांतरण नहीं करने, स्वस्थ वातावरण में कार्य करने, लक्ष्य के प्रति अगाध समर्पण करने, स्वःप्रेरणा/इच्छाशक्ति से कार्य करने एवं निष्काम कर्म करने आदि विभिन्न उपयोगी बातों से प्रतिभागियों का उत्साहवर्धन किया। अपने व्याख्यान के दौरान डॉ.बिस्सा ने प्रतिभागियों से परस्पर विचार–विमर्श भी किया तथा उनकी जिज्ञासाओं का निराकरण प्रस्तुत किया।

इस अवसर पर केन्द्र निदेशक डॉ.एन.वी.पाटिल ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि राजभाषा कार्यशाला में ऐसे विषय को इसलिए भी सम्मिलित किया गया है क्योंकि ये हर क्षण, हर कहीं पर घटित होते हुए देखे जा सकते हैं। अभिप्रेरणा (मोटिवेशन) से जुड़े ऐसे अवसरों पर विद्वान वक्ताओं के विचारों का श्रोता अपने स्तर पर आकलन करता है। ऐसे व्याख्यान हमारे अंदर नकारात्मकता के भाव को समाप्त कर सामूहिक रूप में कार्य करने की प्रेरणा देते हैं। सामूहिकता से ही कार्मिक में कार्य कुशलता बढ़ती है जो कि संस्थान एवं कार्मिक दोनों के लिए सही मायने में लाभदायक है। डॉ.पाटिल ने कहा कि अपने दायित्व का सही रूप में निर्वहन ही हमें अंदर से ठोस मजबूती देता है। अतः प्रत्येक व्यक्ति द्वारा अपने कार्यक्षेत्र के प्रति दायित्व, अपने शैली आदि का मूल्यांकन जरूरी है। केन्द्र में आयोजित इस राजभाषा कार्यशाला का संचालन नेमीचंद बारासा ने किया। अंत में सभी के प्रति धन्यवाद के साथ इस कार्यशाला का समापन हुआ।

राजभाषा कार्यशाला : 23 मई, 2016

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में दिनांक 23 मई, 2016 को केन्द्र सभागार में एक दिवसीय राजभाषा कार्यशाला का आयोजन रखा गया। इस कार्यशाला में अतिथि वक्ता के रूप में बीकानेर के प्रसिद्ध समालोचक, लेखक एवं चिंतक डॉ.नंद किशोर आचार्य द्वारा 'गांधी, विज्ञान व तकनीकी एवं विकास' विषयक व्याख्यान प्रस्तुत किया गया।

राजभाषा कार्यशाला : उद्देश्य व महत्व

सर्वप्रथम प्रभारी राजभाषा डॉ. सुमन्त व्यास, प्रधान वैज्ञानिक ने कार्यशाला के उद्देश्य एवं महत्व एवं केन्द्र में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग के संबंध में प्रकाश डाला। प्रभारी राजभाषा ने कहा कि भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल क्रियान्वयन हेतु केन्द्र में नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में एक तथा वर्ष में कुल 4 कार्यशाला का आयोजन अपेक्षित है। इस वित्तीय वर्ष में यह प्रथम कार्यशाला रखी गई है। केन्द्र द्वारा इन कार्यशालाओं में राजभाषा हिन्दी के माध्यम से विविध विषय वर्गीय व्याख्यान भी शामिल किए जा रहे हैं ताकि प्रतिभागी इनसें लाभान्वित हो तथा कार्यशालाओं को सार्थकता प्रदान की जा सके।

व्याख्यान सत्र

अतिथि वक्ता के रूप में प्रसिद्ध समालोचक, लेखक एवं चिंतक डॉ. नंद किशोर आचार्य, ने 'गांधी, विज्ञान एवं तकनीकी विकास' विषयक व्याख्यान करते हुए कहा कि किसी भी विचारक/व्यक्ति की प्रासंगिकता क्या है। यह जानने से पहले समस्या को जानना जरूरी है। समस्या सुलझने वाली है तो वह प्रासंगिक है अन्यथा अप्रासंगिक। मानव अपनी स्वः इच्छाओं की संतुष्टि करने वाला होने के कारण रूग्ण होता चला जा रहा है। अतः मानव को स्वः केन्द्रित न होकर जीवन केन्द्रित होना चाहिए। अतिथि वक्ता डॉ. आचार्य ने गांधी जी की विचारधारा को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हो रहे तकनीकी/

औद्योगिक विकास से जोड़ते हुए आगे कहा कि आर्थिक क्षेत्र में सही मायने में विकास तय करने हेतु अमीर और गरीब के बीच के अंतर को कम करना होगा। गांधी जी एक अहिंसक समाज की कल्पना करते थे जहां कहीं भी किसी का शोषण न हो। आप जो कुछ भी करना चाहते हैं वह अहिंसक प्रक्रिया में होना चाहिए।

उन्होंने आज की उपभोगीय प्रवृत्ति को सदन में रखते हुए कहा कि गांधी जी की दृष्टि में जरूरत से ज्यादा संग्रह/इस्तेमाल एक तरह की हिंसा ही है। हमें गांधी के दृष्टिकोण से इसका हल ढूंढना होगा। समस्या को समझना होगा। डॉ.आचार्य ने मशीनीकरण/अधिक उत्पादन से उत्पन्न रोजगारविहीन समस्या की ओर प्रतिभागियों का ध्यान आकर्षित किया। व्याख्यान के अंत में डॉ.आचार्य ने राजभाषा हिन्दी से जुड़े अपने कार्य अनुभव पर भी प्रकाश डाला।

इस अवसर पर केन्द्र निदेशक डॉ.एन.वी.पाटिल ने कार्यशाला कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए कहा कि पिछले 60 वर्षों में तकनीकी स्वरूप व विकास की प्रगति का आकलन किया जाना चाहिए। हमें गांधी दर्शन को ध्यान में रखते हुए ऐसे समाज की रचना करनी है जो हिंसक प्रवृत्तियों को दूर रखकर सच्चे अर्थों में उत्पादन को बढ़ाएं। डॉ.पाटिल ने कहा कि पूरा समाज तकनीकी उपलब्धियों से लाभान्वित हो तभी यह समझा जाएगा कि हमारा राष्ट्र सुविकसित हो रहा है। आज उपभोक्तावादी संस्कृति दैनिक जीवन पर पूर्णतया हावी है।

डॉ.पाटिल ने अतिथि वक्ता द्वारा प्रस्तुत गूढ़ विषय को अत्यंत महत्वपूर्ण बताते हुए कहा कि राजभाषा कार्यशाला आदि विभिन्न अवसरों पर विद्वजनों द्वारा प्रस्तुत व्याख्यानों/विचारों से जीवन में महत्वपूर्ण बदलाव लाया जा सकता है क्योंकि प्रस्तुत विचार इन चिंतकों के जीवन यात्रा का अनुभूत–सार होता है। डॉ.पाटिल ने राजभाषा इकाई को सार्थक कार्यशाला पर बधाई देते हुए इस क्रम को अनवरत जारी रखने हेतु प्रोत्साहित किया।

केन्द्र के प्रभारी राजभाषा डॉ.सुमन्त व्यास, प्रधान वैज्ञानिक ने कार्यशाला का संचालन किया तथा धन्यवाद प्रस्ताव श्री नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी ने व्यक्त किया। राजभाषा कार्यशाला संबंधी समाचार का, विभिन्न समाचार पत्रों द्वारा पर्याप्त स्वरूप में प्रकाशन किया गया।

केन्द्र को राजभाषा सम्मान

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर की ओर से भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर को वर्ष 2015–16 के दौरान नगर में राजभाषा का 'विशिष्ट कार्यों' में उत्कृष्ट प्रयोग करने के लिए सम्मानित किया गया। यह सम्मान दिनांक 03.06.2016 को मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय में संपन्न नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर की प्रथम छमाही बैठक में श्री राजीव सक्सेना, अध्यक्ष नराकास एवं मंडल रेल प्रबंधक, बीकानेर द्वारा डॉ.एन.वी.पाटिल, निदेशक, भाकृअनुप'राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र को प्रशस्ति पत्र भेंट कर दिया गया।

प्रकाशन

1. वार्षिक प्रतिवेदन 2014–15 का द्विभाषी (हिन्दी व अंग्रेजी में अलग–अलग) प्रकाशन
2. करभ 2015 अंक –13 का प्रकाशन
3. टोरडिया में ठीकरिया (स्किन कैंडीडियेसिस) – विस्तार पत्रक
4. ऊँटों से मनुस्यों में फैलने वाली बीमारियाँ और उनकी रोकथाम– विस्तार पत्रक

स्वच्छ भारत अभियान गतिविधियाँ